जवासा जल रोग है आक* सूख बरखंत।
ओला अगिनी एकसर संसारी बिच संत ॥२०॥
अठसठ तीरथ में मिली देखो गंगा ज्ञान।
न्यारी धारा चलत है गंगा सागर जान ॥२१॥
सतगुरु संगत सार है सकल कुसँग सब जीव।
पानी में निकसै नहीं अनेक जतन कर घीव ॥२२॥
परमानँद से बिछुड़ता यह मन हंसा काग।
मुक्ति नहीं सतगुरु बिना कहाँ छिपै लै दाग ॥२३॥
कमरी के रँग ना चढ़ै कोइला नहीं सपेद।
सतगुरु बिन सूझै नहीं कहा पढ़त है बेद ॥२४॥
कौड़ी बदले जात है यह मानिक नग हंस।
पाँचो सेती बँध रहा जुग जुग होत बिधंस ॥२५॥
पाँच पचीस कुसंगनी सुन्न सिखर नहिं न्हाहिं।
सतगुरु सूँ मेला नहीं यौं चौरासी जाहिं ॥ २६ ॥
सतगुरु सूरत नगर से आये हैं बड़ काज।
काम कदर जाने नहीं हंसा चढ़ै जहाज ॥२७॥
कस्तूरी की बासना मिरगा लेत सुबास।
निरख परख आवै नहीं बहुरि ढँढोरै घास ॥२८॥
कस्तूरी महकंत है साहब है संबूह।
नौका चढ़ै न नाम की अंधे डूबत कूँह ॥ २९ ॥

*मदार।

संगत का अंग

संगत कीजै साध की संसारी भटकंत ।
पिंजर सूआ बसत है किस कूँ बूझै पंथ ॥ १ ॥
सतगुरु की संगत भली हंसा थीर मुकाम ।
जुगन जुगन के बीछुरे परसे लोक निदान ॥ २ ॥
साधौं की संगत करै बड़ भागी बड़ देव ।
आपन तौ संसा नहीं और उतारै खेव ॥ ३ ॥
संगत सुर की कीजिये असुर न आवै होस ।
बुध भ्रष्टी सूँ संग क्या उलटा देही दोस ॥४॥
संगत सुर की कीजिये असुरन सूँ क्या हेत ।
डार मूल पावै नहीं ज्यौं मूली का खेत ॥ ५ ॥
संगत सुर की जो रहै असुरों की है गंध ।
सुर हैं स्वरगालोक के असुर मलीने जिंद ॥ ६ ॥
सूआ सतगुरु कहत है पिंजरे परे परान ।
खिड़की खुलते उड़ गया मंतर लगा न कान ॥७॥
अंतर हेत न प्रीत पद सूए ज्यौं संसार ।
पिंजरा खाली तासु का उड़ गया बनौं मँझार ॥८॥
सत गुर दत दाता* कहै बानी बड़ी बलंद ।
मुख बोले क्या होत है अंतर हेत न अंध ॥ ९ ॥
सुअटा खाली रह गया पार पहूँचा नाहिं ।
राम राम प्रानी कहै जम की नगरी जाहिं ॥१०॥

*तोता के पढ़ाने की बोली ।

सुअटा पढ़ै सुभान गत अंतर नहीं उचार।
कुंज* कुरल† अँड पोखहीं कोसन सहस हजार ॥११॥
कुरल अंड हर हेत जप अललपच्छ गहि तार।
हिरदा सुद्ध सरीर सर‡ कच्छप दृष्ट निहार ॥१२॥
ऐसी संगत जो मिलै तो साँईं सूँ भेट।
ऊपरली बरबाद है जम मारैगा फेट ॥ १३ ॥
कुरला कच्छप अलल कूँ किन समझाया ज्ञान।
आड़ा परदा है नहीं हिरदे अंतर ध्यान ॥ १४ ॥
ऐसी संगत जो मिलै भगत गर्भ प्रहलाद§।
नारद से सतगुरु मिलैं सूझै अगम अगाध ॥१५॥
सुकदे गर्भ जोगेस्वर§ ध्रुव का ध्यान अमान।
लाख बरस के बह गये पाँच बरस परवान ॥१६॥
जैसे मीन समुद्र में दसो दिसा कूँ जाय।
हृदय कमल में पैठ कर जो खोजै सो पाय ॥१७॥
ज्यौं कुंजर सिर धुनत है अगला‖ जनम सुझंत।
अबकी हेले¶ नर करे तो सेऊँ पूरे संत ॥१८॥
राज दुवारे जाय कर रापत** रोवै काहि।
पग जंजीर न डारिये कजली बन कूँ जाहि ॥१९॥
सीस महावत बसत है अंकुस मोड़ समोड़।
बचन फिरत है पलक में साँईं नाहीं लोड़†† ॥२०॥

*कुंजबन चिड़िया। †कोक चिड़िया। ‡ तालाब। §कहते हैं कि प्रहलाद और सुकदेव मा के पेट से भक्त पैदा हुए। ‖ पुरबला। ¶बार। ** हाथी। †† इच्छा।

ऐसा हाफिज* फील है रहत गयंद गियान ।
राज दुवारे बन्धिया बिन साँईं के ध्यान† ॥२१॥
सुन्न समुद जो मन रहै तो नहिँ भरमै प्रान ।
अरस कुरस से भिन्न है देखै अकल अमान ॥ २२ ॥
सुन्न सरोवर सिखर सर सूभर‡ तालम ताल ।
मन मरजीया छोड़िये लावै हीरा लाल ॥ २३ ॥
सुन्न सरोवर सैर कर गगन उड़ाना मन्न ।
अगम भूमि भूलै नहीं लावै नाम रतन्न ॥ २४ ॥
सुन्न सिखर संगत करै भूलै खोज न पंथ ।
फेर उलट हटिहै नहीं रावत जेहा दंत§ ॥ २५ ॥
सती पुकारै सर‖ चढ़ी मुख बोलत है राम ।
कौतुक देखन सो गये जिनके मन सहकाम ॥ २६ ॥
सती जरै अरु सर जरै कौतुक देखनहार ।
धाम जहाँ का तहाँ है मिलै रूप संसार ॥ २७ ॥
सती बहुर उपजै नहीं घर जाने की प्रीत ।
सती रटत है राम कूँ कौतुक गावै गीत ॥ २८ ॥
जनम पुरबला सूझई जरिहैं बारंबार ।
बिषय बासना उर बसै तन कूँ करिहैं छार ॥ २९ ॥

---

* कुरान को याद किये हुए । †मशहूर है कि हाथी को अपना पिछला जन्म याद रहता है कि मैं कौन था और भगवन्त को भूल जाने से पशु जोनि पाई इसी सोच में हाथी खड़ा २ अपना शरीर और सिर धुनता है और प्रण करता है कि अगले जन्म में जो दया से मनुष्य तन पाऊँगा तो मालिक को कभी न बिसारूँगा । ‡ शुभ्र=प्रकाशमान । §जैसे हाथी के दाँत बाहर निकले हुए फिर भीतर नहीं पैठते । ‖चिता ।

सती न संका जरन की काम लुब्ध* घट बीच ।
सकल सखी झूलन चलीं जैसे सावन तीज ॥ ३० ॥
जनम इकीस जो सँग जरै तौ स्वर्गापुर बास ।
मन इच्छा फल पावहीं पुरुष समीप निवास ॥ ३१ ॥
नारी पुरुष पिरेम सूँ बैठे स्वर्ग अकास ।
नव करोर दिव† बरस लग पुरवत मन की आस ॥३२॥
करनी भरनी भुगत कर पैठत हैं मृत लोक ।
बिना भगति भावै नहीं सब संगत में दोष ॥ ३३ ॥
तपी तपै तन कूँ दहै पाँचो इंद्री साध ।
नहिं इच्छा दीदार की भूले आदि अनाद ॥ ३४ ॥
लाख बज्र कूँ झेल कर सूरे जूझैं खेत ।
बादी जोगी हठ करैं चिनगी बरखै रेत ॥ ३५ ॥
बादी जोगी बँध रहा मन इच्छा बड़ राज ।
अंत बेर यौं मारिये ज्यौं तीतर पर बाज ॥ ३६ ॥
तन तो बाँबी होगया मन की गई न बान ।
स्वर्ग पहुंच दोजख गये सतगुरु लगे न कान ॥३७॥
तन की तारी लावई मनसा जरै मसाल ।
राज पाय नरकै परै बाँधी पोट जवाल‡ ॥ ३८ ॥
पाँचो द्रीइं मन छठा फिरता डाँवाँडोल ।
सप्त पुरी का राज तज लगे तपस्या झोल ॥ ३९ ॥
तप से धीर न होत है यह मन रंगा राज ।
साहब की नहिँ बंदगी साजा झूठा साज ॥ ४० ॥

*लोभ । †देवताओं का बरस । ‡ ख़राबी ।

तप तारी तन में लगी परगन* की तकसीस ।
साहब की नहिं बंदगी सतगुरु ना बकसीस ॥ ४१ ॥
मन इच्छा नित तू करै राज करन मन लोभ ।
बहु बिध घट में कामना ज्यौं बिरछा पर गोभ† ॥४२॥
सँगत कुसंगत अंतरा इकसाँ ही मत जान ।
ज्यौं सोवत है सेज पर त्यौं धरे अंत मसान ॥४३॥
पारख‡ प्रेम न आवही ना कहिँ हाट जुखंत ।
सौदा तबहीं होत है भेटैँ सतगुरु संत ॥ ४४ ॥
जैसे माता गर्भ को राखै जतन बनाय ।
ठेस लगै तो छीन है ऐसे भगति दुराय§ ॥ ४५ ॥
दम सुमार आधार रख पलकौं मद्ध धियान ।
संतौं की संगति करै समझ बूझ गुरु ज्ञान ॥ ४६ ॥
इड़ा पिंगला सोध कर चढ़ गिरवर कैलास ।
दो दल की घाटी जहाँ भगल बिदाहै‖ दास ॥ ४७ ॥
ब्रह्म रंध्र के द्वार को खोलत है कोइ एक ।
द्वारे से फिर जात हैं ऐसे बहुत अनेक ॥ ४८ ॥
संख भगल छल होत है नद है परले पार ।
संगत सतगुरु की करै तब पावै दीदार ॥ ४९ ॥
संसारी सूँ साख क्या ऊसर बरषा देख ।
बोवै बीज न खेत हित तो क्या काटै मेख ॥ ५० ॥
नाम रते निरगुन कला मानस नहीं मुरार¶ ।
ज्यौं पारस लोहा लगै कटिहै करम लगार ॥ ५१ ॥

*परगना । †नया कुला । ‡परखने में । §छिपाय । ‖घास निकालने के लिये खेत को फिर से जोतने का नाम । ¶मुराद ।

बैराग का अंग।

बैराग नाम है त्याग का पाँच पचीसो माहिँ।
जब लग संसा सरप है तब लग त्यागी नाहिँ ॥ १ ॥
बैराग नाम है त्याग का पाँच पचीसो संग।
ऊपर की कँचल तजी अंतर बिषय भुअंग ॥ २ ॥
असन बसन सब तज गये तज गये गाँव गिरेह।
माहँ संसा सूल है दुरलभ तजना येह ॥ ३ ॥
बाज कुहीं* गत ज्ञान की गगन गरज गरजंत।
लूटै सुन्न अकास तें संसा सरप भछंत ॥ ४ ॥
नित ही जामै नित मरै संसय माहिँ सरीर।
जिनका संसा मिट गया सो पीरन सिर पीर ॥ ५ ॥
ज्ञान ध्यान दो सार है तीजे तत्त अनूप।
चैाथे मन लागा रहै सो भूपन सिर भूप ॥ ६ ॥
कासी करवत लेत है आन कटावै सीस।
बन बन भटका खात है पावत ना जगदीस ॥ ७ ॥
संसा तो संसार है तन पर धारै भेख।
मरकब† होहिँ कुम्हार के सन्यासी अरु सेख ॥ ८ ॥
मन की भीनी ना तजी दिलही माहिँ दलाल।
हर दम सौदा करत है करम कुसंगति काल ॥ ९ ॥
मन सेती खोटी गढ़ै तन सूँ सुमिरन कीन।
माला फेरे क्या हुआ दुर कुट्टन बेदीन ॥ १० ॥

*शिकरा। †कुम्हार के लादने के जानवर यानी गधे।

तन मन एक वजूद कर सुरत निरत लौ लाय ।
बेड़ा पार समुद्र होइ एक पलक ठहराय ॥ ११ ॥
दृष्टि पड़े सो फना* है धर† अंबर‡ कैलास§ ।
किरतम बाजी झूठ है सुरत समोवो स्वाँस ॥ १२ ॥
सुरत स्वाँस कूँ एक कर कंज‖ किनारे लाय ।
जा का नाम बिराग है पाँच पचीसो खाय ॥ १३ ॥
पाँच पचीसो भून कर बिरह अगिन तन जार ।
सो अबिनासी ब्रह्म है खेलै अधर अधार ॥ १४ ॥
त्रिकुटी आगे झूलता बिनहीं बाँस¶ बरंत** ।
अजर अमर आनंद पद परखै सुरत निरंत ॥ १५ ॥
यह महिमा कासे कहूं नैनौं माहीं नूर ।
पल पल मैं दीदार है सुरत सिंधु भरपूर ॥ १६ ॥
झीना दरसै दास को पुहुप रूप परमान ।
बिन ही बेली गहबरे†† है सो अकल‡‡ अमान ॥१७॥
अकल अभूमी§§ आदि है जा के नाहीं अंत ।
दिलही अंदर देव है निर्मल निर्गुन तंत ॥ १८ ॥
तन मन सेती दूर है माहैं मंझ मिलाप ।
तरवर छाया बिरिछ में है सो आपे आप ॥ १९ ॥
नौ तत के तो पाँच हैं पाँच तत्त के आठ ।
आठ तत्त का एक है गुरू लखाई बाट ॥ २० ॥
चार पदारथ एक कर सुरत निरत मन पैान ।
असल फकीरी जोग यह गगन मँडल कूँ गैान ॥ २१ ॥

---

* नाश होने वाला है । † धरती । ‡ आकाश । § स्वर्गादि ।
‖ शिव-नेत्र । ¶ खंभा । ** रस्सी । †† घने पेड़ । ‡‡ अकाल । §§ बेठौर ।

पंछी घाला आलना* तरवर छाया देख ।
  गरभ जून के कारने मन मेँ किया बिबेक ॥ २२ ॥
जैसे पंछी बन रमा संझा ले बिसराम ।
  प्रात समय उड़ जात है सो कहिये निःकाम ॥ २३ ॥
जा के नाद न बिंदु है घट मठ नहीं मुकाम ।
  गरीबदास सेवन करै आदि अनादं राम ॥ २४ ॥

लै का अंग

लै† लागी तब जानिये जग सूँ रहै उदास ।
  नाम रटै निरभय कला हर दम हीरा स्वाँस ॥ १ ॥
लै लागी तब जानिये जग सूँ रहै उदास ।
  नाम रटै निरदुंद होय अनहदपुर मेँ बास ॥ २ ॥
लै लागी तब जानिये हर दम नाम उचार ।
  एकै मन एकै दिसा साँईं के दरबार ॥ ३ ॥
लै लागी तब जानिये हर दम नाम उचार ।
  एकै मन एकै दिसा खड़ा रहै दरबार ॥ ४ ॥
लै लागी तब जानिये हर दम नाम उचार ।
  धीरे धीरे होयगा वह अल्लह दीदार ॥ ५ ॥
लै लागी तब जानिये हर दम नाम हनोज ।
  बिकट पंथ पावै नहीं मौनी केसा खोज‡ ॥ ६ ॥
लै लागी तब जानिये हर दम नाम हनोज़ ।
  मैँ मेरी कूँ पटक दे सिर से डारो बोझ ॥ ७ ॥

---

*खोता लगाया । †लौ । ‡जैसे गूंगा किसी बेजाने हुए स्थान या मनुष्य की खोज में सैन से पूछै तो पता नहीं लग सकता ।

लै लागी तब जानिये लै की लगै दुकान ।
लै लँगर* सौदा करै छाँड़ महातम मान ॥ ८ ॥
लै लागी तब जानिये लै की लगै दुकान ।
बखत परे सौदा करै कोठे डारै ज्ञान† ॥ ९ ॥
महँगा सस्ता देख ले सौदा करै बिचार ।
दुगुने तिगुने चैागुने करिहै साहूकार ॥ १० ॥
महँगा सस्ता देख ले सौदा करै समोय‡ ।
दूने तिगुने चैागुने कर ले जाता कोय ॥ ११ ॥
पूँजी साहूकार की बंजारा संसार ।
पूंजी माल गँवाइया नाहक बहै बिगार ॥ १२ ॥
ये पुरपट्टन ये गली बहुरि न देखै आय ।
सतगुरु सूँ सौदा हुआ भर ले माल अघाय ॥ १३ ॥
ये पुरपट्टन ये गली बहुरि न देखै आय ।
सतगुरु सूँ सौदा हुआ लीजै माल लदाय ॥ १४ ॥
ये मुकते§ निज पैठ हैँ ये मुकते बाजार ।
सतगुरु सूँ सौदा भया भरले बालद‖ लार ॥ १५ ॥
राम नाम निज सार है राम नाम निज मूल ।
राम नाम सौदा करो राम नाम नहिं भूल ॥ १६ ॥
इस दुनियाँ मैँ आय कर इन चारौँ कूँ बंध ।
काम क्रोध छोह चूहरा¶ लोभ लपटिया अंध ॥ १७ ॥
मोह मवासी पकर ले ममता का सिरताज ।
दुरमत दामनगीर होइ निःचल नगरी राज ॥ १८ ॥

---

*ख़ैरात-ख़ाना । †कोठे पर ज्ञान को पटक दे । ‡चुप कर ।
§अनेक । ‖बैल । ¶भंगी ।

ज्ञान जोग अरु भगति लै सील संतोष समाधि ।
लै लागी तब जानिये छूटै सकल उपाधि ॥ १९ ॥
ज्ञान जोग अरु भगति लै सील संतोष बिबेक ।
लै लागी तब जानिये जब दिल आवै एक ॥ २० ॥
गगन गरज भाठी चुए हीरा घंटिक सार ।
लै लागी तब जानिये उतरै नहीं खुमार ॥ २१ ॥
गगन गरज भाठी झरै चोखा फूल चुअंत ।
सिर के साँटे पाइये कोई साधु पिअंत ॥ २२ ॥
गगन गरज घन बरषहीं बाजै दीरघ नाद ।
अमरापुर आसन करैं जिन्ह के मते अगाध ॥ २३ ॥
गगन गरज घन बरषहीं बाजै अनहद तूर ।
लै लागी तब जानिये सनमुख सदा हजूर ॥ २४ ॥
गगन गरज घन बरषहीं दामिन खिमै अखंड ।
दास गरीब कबीर है सकलदीप नौ खंड ॥ २५ ॥

साँच का अंग

साँचा सतगुरु जो मिलै हंसा पावै धीर ।
झकझोले जूनी मिटै मुरसिद गहिर गँभीर ॥ १ ॥
साँचे कूँ तो साँच है कूड़े कूँ है कूड़ ।
बैल होत कंगाल का गल मैं पहरे जूड़ ॥ २ ॥
साँचे कूँ परनाम है झूठे के सिर दंड ।
ठौर नहीं तिहुं लोक मैं भरमत है नौ खंड ॥ ३ ॥

साँचे का सेवन करो झूठे कूँ ले लूट ।
साँच सब्द सूँ यौं डरै ज्यौं स्याने की मूठ* ॥ ४ ॥
साँचे का सुमिरन करो झूठे द्यो जंजाल ।
साँचा साहब आप है झूठ कपट सब काल ॥ ५ ॥
साँचे के चरनौं लगो झूठे का ल्यो सीस ।
साँच सकल में रहैगा झूठ न बिस्वे बीस ॥ ६ ॥
साँचे कूँ सब सौंप द्यो भगति बंदगी नाम ।
झूठा कपटी मारिये हमरे कौने काम ॥ ७ ॥
साँचे कूँ स्वर्गापुरी झूठा दोजख माहिं ।
चंद सूर की आयु† लग दोजख निकसै नाहिं ॥ ८ ॥
साँचे संकर रीझहीं ब्रह्मा जोड़ैं प्रीत ।
बिसनू करैं प्रतिपाल हद‡ सकल संत संगीत ॥ ९ ॥
साहब जिन्ह के उर बसै झूठ कपट नहिं अंग ।
तिन्हका दरसन न्हान है कहँ परबी फिर गंग ॥ १० ॥
साँचे के सन्मुख रहो झूठे सूं क्या नेह ।
संख जुगन जुग परैगी झूठे के मुख खेह ॥ ११ ॥
झूठा सब संसार है साँचा है सो एक ।
पारब्रह्म सतपुरुष पद सब बसुधा§ की टेक ॥ १२ ॥
साँचे साँई संत जन झूठे हैं सब लोक ।
मेढक मछली तड़फड़ै ज्यौं ओछे जल जौंक ॥ १३ ॥
साँचे सदा मसंद‖ पर उस चंगे दरबार ।
झूठौं के जूती पड़ै जम किंकर की मार ॥ १४ ॥

*गुनी के जादू का बान । †आयुर्दाय । ‡बहुत । §पृथ्वी । ‖तकिया मसनद ।

झूठे कपटी जीव सब साँचे संत सुजान ।
तिरबाचा छूटै नहीं झूठौं ना कर कान ॥ १५ ॥
साँचौं के सँग चालिये झूठौं संग न जाह ।
रावन मिलता है नहीं बीभीखन की बाँह ॥ १६ ॥
बीभीखन लंका दई रावन कटि है मूड़ ।
साँचे साधू भवँर हैं झूठे गोबर भूढ़* ॥ १७ ॥
झूठा कंसा मारिये फिर चानूर चमार ।
रुकमिन कूँ ब्याहन गया सीस कटा सिसुपाल ॥१८॥
बालि सहस्त्राबाहु से मारे छाती तोर ।
साँचा जन प्रहलाद है झूठी जल गइ होरि† ॥१९ ॥
हिरनाकुस के उदर कूँ नख से गेरा फार।
निरगुन सूँ सरगुन भये धर नरसिँघ औतार ॥ २० ॥
द्रोपदि चीर बधाइया‡ पीतंबर पटनाल ।
दूसासन से पच गये कौरौं पड़ा जवाल§ ॥ २१ ॥
दुर्जोधन की मेदनी होगई खंड बिहंड ।
द्रोनाचार्ज भीषम पिता बचे न धर सिर दंड ॥ २२ ॥
गज अरु ग्राह उबारिया पसू जूनि सूं संत ।
दान मेड़ छाँड़ी नहीं करन तुड़ाये दंत‖ ॥ २३ ॥

---

*गुबुवा । †होलका जो अग्नि से अमर समझी जाती थी अपने भतीजे प्रहलाद भक्त को जलाने के लिये गोद में लेके आग में बैठी सो आप ही जल गई और प्रहलाद बच गये । ‡बढ़ाया । §खराबी ।

‖राजा करन ने दान के समय सोना कम होजाने पर अपना दाँत तोड़ डाला कि उसमें से जड़ा हुआ सोना निकाल कर दान कर सकैं ।

महाभारत के जंग मैं पाँच उबारे पंड ।
जुगन जुगन की भक्तनी घंटा लै रख अंड* ॥ २४ ॥
साँचौं के संगति रहै झूठौं सेतीं दूर ।
परमेसुर करुना मई रहै सकल घट पूर ॥ २५ ॥
बालमीक आये सुपच बजा पाँच-जन नाद ।
पंडौं जग असुमेध मैं एकै पाया साध† ॥ २६ ॥

*भगवंत ने भरुही चिड़िया की प्रार्थना पर महाभारत के मैदान में उसके अंडों की रक्षा के लिये हाथी का घंटा गिरा कर उन को ढाँक कर बचा दिया ।

†पांडवों के राजसूय यज्ञ में यद्यपि पृथ्वी भर के सब ऋषीश्वर और मुनीश्वर और योगीश्वर आदि उपस्थित थे पर श्रीकृश्न का पंचजन्य शंख जो चिन्ह यज्ञ के सुफल होने का है नहीं बजा । राजा युधिष्ठिर ने कारण पूछा तो श्रीकृश्न ने उत्तर दिया कि यह सब जो जमा हुए हैं अहंकारी हैं इन में कोई सच्चा भक्त नहीं है, जाव बाल्मीकि नामक स्वपच अर्थात डोम को जो सच्चा भक्त और महात्मा है आदर सहित बुला लाओ तब यज्ञ सुफल होगा । यह सुन कर भीमसेन स्वपच को बुलाने को भेजे गये । भीमसेन ने अहंकार से स्वपच से कहा कि चल तुझे राजा ने याद किया है । स्वपच ने जवाब दिया कि मैं पूजा पर बैठा हूं ज़रा माला मेरी खूंटी से उतार कर मुझे दे दीजिये तो जाप करके तुर्त चला आऊं । भीमसेन ने कुभाव से माला को खूंटी से उतार कर देना चाहा पर यद्यपि उनको अस्सी हज़ार हाथी का बल था उस माला को न उठा सके, फिर भी अहंकार न छूटा और नाक भौं चढ़ाकर बोले कि तूही उठकर लेले मुझे देर होती है । जब भीमसेन लौटकर गये तो श्रीकृश्न से कहा कि महाराज स्वपच थोड़ी देर में हाज़िर होता है । श्रीकृश्न हँस कर युधिष्ठिर से बोले कि आप खुद जाकर बुला लाइये । जब राजा युधिष्ठिर स्वपच के घर पहुंचे तो उसे खिचड़ी पकाते पाया, बड़ी आधीनता से प्रार्थना की कि यज्ञ में सुशोभित होकर उसे सुफल कीजिये । स्वपच बोला कि मैं तो नीच डोम यज्ञ में बैठने योग्य नहीं हूं पर राजा की आज्ञा सिर आँखों पर धरता

भेखौं के लसकर फिरैं बानी चोर कठोर।
सतगुर धाम न परसहीं चौरासी के ढोर* ॥ २७ ॥
पारंगत† परिचय नहीं बानी कहै बनाय।
धरमराय दरगह‡ सहै झूठा लतरी§ खाय ॥ २८ ॥
कपटी कूं भावै नहीं भगति मुकति की रीत।
झूठा लंगर फिरत है साधौं टोहत सीत‖ ॥ २९ ॥

हूं ज़रा खिचड़ी खालूं। राजा ने जवाब दिया सब काम से निपट लीजिये मुझे जल्दी नहीं है। स्वपच ने हाँडी से थोड़ी खिचड़ी निकाल कर राजा के सामने धरी, राजा ने यह कह कर कि धन्य भाग उसके जिसे भक्तों का प्रसाद मिले पूरे भाव से हाथ फैलाया परन्तु स्वपच ने अपना हाथ खींच लिया कि ऐसा नहीं हो सकता और उठकर राजा के साथ हो लिया। जब यज्ञ में पहुंचा तो श्री कृश्न ने पांडवौं की स्त्री द्रौपदी से उत्तम उत्तम प्रकार के भोजन बनवा रक्खे थे जिसे थालौं में रुकमिणीजी ने सजाकर स्वपच के सामने धरा। स्वपच मीठे सलोने खट्टे इत्यादि सब प्रकार के भोजन एक साथ सानकर मुंह में भरने लगा। यह तमाशा देख कर द्रौपदी के जी में आया कि आख़िर तो डोम मेरे पकाये हुए उत्तम खानों का स्वाद क्या जाने। इस ख़याल के उपजते ही स्वपच ने हाथ खींच लिया और पंचजन्य शंख जो उसके आते ही बजने लगा था एक बारगी बंद हो गया तब लोग फिर श्रीकृश्न के समीप आये। श्रीकृश्न बोले कि द्रौपदी से पूछो कि उसके जी में क्या ख़याल गुज़रा। द्रौपदी बड़ी लज्जित हुई तब श्रीकृश्न ने आज्ञा की कि यह भोजन अशुद्ध होगया रुकमिणी दूसरी सामग्री भोग की भाव पूर्बक बनावे तब स्वपच भक्त के भोग के योग्य होगी। इस पर द्रौपदी ने बड़ी नेष्ठा से दूसरा भोग तैयार करके दीनता के साथ स्वपच के आगे धरा और ज्योंही स्वपच ने खाना शुरू किया पंचजन्य शंख बजने लगा और यज्ञ सुफल हुआ।

* चौपाया। † जो भवसागर पार हुए हैं। ‡ दरबार। § पनही। ‖ साधौं का प्रसाद खोजता है।

साँचे सूरे संत हैं मरदाने जूझार* ।
लाख दोस ब्यापै नहीं एक नामकी लार ॥ ३० ॥
सत्त सुकृत अरु बंदगी जा उर ज्ञान बिवेक ।
साध रूप साँई मिले पूरन ब्रह्म अलेख ॥ ३१ ॥
सत्त सुकृत संतोष सर आधीनी अधिकार ।
दया धरम जा उर बसै सो साँई दीदार ॥ ३२ ॥
आदि अंत मध संत हैं रंचक झूठ जहान ।
कपटी जुग जुग कपट है लख चैारासी खान ॥३३॥
साँचे कूँ संका नहीं झूठे भय घर माहिं ।
कोट किले क्या चुनत है झूठा छूटै नाहिं ॥ ३४ ॥
साँई बिन कित ठौर है साँई बिन कित बास ।
साँच मिलैगा सांच में झूठे जाहिं निरास ॥ ३५ ॥
साँच भगति नरहर† रची झूठा रचा जहान ।
झूठा सब संसार है साँचे साधू जान ॥ ३६ ॥
सत्त सुकृत की बंदगी सत्त सुकृत का जाप ।
झूठे दोजख‡ दीजिये साँचा आपै आप ॥ ३७ ॥
साहब सेती दोसती संतोँ सेती प्यार ।
तिन्ह को संका है नहीं धरमराय दरबार ॥ ३८ ॥

---

*योधा । †परमेश्वर । ‡नरक ।

बिचार का अंग

ज्ञान बिचार न ऊपजै क्या मुख बोलै राम ।
संख बजावे बादई रते न निरगुन नाम ॥ १ ॥
ज्ञान बिचार बिबेक बिन क्यों दम तोरै स्वाँस ।
कहा होत हरि नाम सूँ जो दिल ना बिस्वास ॥२॥
ज्ञान बिचार बिबेक बिन क्यों भौंकत है स्वान ।
दस योजन जल में रहै भीजत ना पाखान ॥ ३ ॥
ज्ञान बिचार बिबेक बिन क्यों रैंकत खर गीध ।
कहा होत हरि नाम सूं जो मन नाहीं सीध ॥४॥
समझ बिचारे बोलना समझ बिचारे चाल ।
समझ बिचारे जागना समझ बिचारे ख्याल ॥ ५ ॥
करै बिचारै समझ कर खोज बूझ का खेल ।
बिना मथे निकसै नहीं है तिल अंदर तेल ॥ ६ ॥
जैसे तिल में तेल है यों काया मध राम ।
कोल्हू में डारे बिना तत्त नहीं सहकाम ॥७॥
बिचार नाम है समझ का समझ न परी परक्ख ।
अकलमंद एकै घना बिना अकल क्या लक्ख ॥८॥
बिना बिचारे क्या लहै कस्तूरी भटकंत ।
बिन बूझे नहिं पाइये गाँव डगर मग पंथ ॥ ९ ॥
ज्ञान सफा के चौक में जहाँ बिचार बिबेक ।
कुटिलाई जिव बहुत हैं निरमल अंगा एक ॥१०॥

बिना बिचारे भरम है सुरपति सरिखा होय ।
गौतम रिषि गुरुवा बड़े जा की पत्नी जोय* ॥११॥
बिना बिचारे बिचरता बैरागी सुकदेव ।
सप्त पुरी मैं गमन कर ढूँढ़े जनक बिदेह† ॥१२॥

*बिना बिचार के इन्द्र सरीखा दूषित हो जाता है जिसने अहिल्या के संग प्रसंग किया ।

†शुकदेव जी के पिता व्यासजी ने उन को बहुत समझाया कि घर के त्याग करने से कुछ परमार्थ का काम नहीं बनता पर शुकदेव जी के मन में यह बात न बैठती थी सातो पुरी इत्यादि की यात्रा करते ही रहे तब व्यासजी ने थक कर उन से कहा कि एक बेर राजा जनक से मिल लो फिर जो जी में आवे सो करो । शुकदेव जी राजी हुए और राजा जनक के पास गये । राजा जनक को राज्य कार्य में फँसा हुआ देख कर इन के मन से उनकी महिमा जाती रही । जब जनक ने पूछा कि कैसे आये तो उत्तर दिया कि पिता जी से आप के ज्ञानी और बिदेह होने की महिमा सुनी थी सो देख लिया और हम तो बन में एकान्त बास करेंगे । इस पर जनक ने अपने तपोबल से ऐसा चमत्कार किया कि राज्य भवन में जहाँ वह बैठे थे बड़े ज़ोर से आग लग गई । राजा जनक निश्चिन्त बैठे अपना काम करते रहे परन्तु शुकदेव जी अपनी कोपीन और कमंडल सम्हाल कर भागने लगे । इस पर राजा हँसे और कहा कि इसी को त्याग कहते हो! मेरा सब महल और माल जल रहा है सो मुझे फ़िकर नहीं है और तुम एक लँगोटी के बचाने में बेचैन हो गये, याद रक्खो कि जितना तुम को अपनी लँगोटी और कमंडल का बन्धन है उतना मुझे अपने सकल राज का नहीं है । त्याग मन से होता है तन से नहीं, जब तुम्हारे संग तन, दसों इन्द्री, मन और पंच भूत का कुटुम्ब लगा है तो बाहरी कुटुम्ब के त्याग से क्या होता है । शुकदेव जी यह सुन कर बहुत लज्जित हुए और फिर बन बास का ख़याल छोड़ दिया ।

गोरखनाथ सुनाथ है जंतर मंतर जोग ।
सतगुरु मिले कबीर से काटे दीरघ रोग* ॥१३॥
गँधरपसेन गदहा भया पुत्तर पिता सराप ।
बिना बिचारे पैठ माँ सुना उरबासी लाप† ॥१४॥
जादो गये बिचार बिन भरमे छप्पन क्रोड़ ।
दुर्बासा से छल किया लागी मोटी खोड़‡ ॥१५॥

* गोरखनाथ जी कबीर साहब का नाम सुन कर उन की परीक्षा के अभिप्राय से काशी में आये और आकाश में त्रिशूल पर आसन मार कर बैठे और कबीर साहब को आवाज़ दी कि यहाँ आवो तो बातोलाप करें। कबीर साहब ने जवाब दिया कि आप बड़े सिद्ध हैं मैं तो महा अधम हूं क्योंकर आप तक पहुंच सकता हूं। फिर कबीर साहब ने सत्यलोक में जो पिंड और ब्रह्मांड के परे है आसन लगा कर गोरखनाथ को दया से दर्शन दिये। गोरखनाथ चकित होगये और कबीर साहब के पूरे सतगुरु होने के क़ायल होकर चरनों पर गिरे यह कबीर गोरख की गोष्टी में प्रसिद्ध कथा है।

† राजा गन्धर्पसेन को उरबसी अप्सरा का गान सुनकर मोहित होने से गदहे का चोला धारण करना पड़ा।

‡खोड़=बड़ा अपराध-एक समय दुर्बासा ऋषि घूमते २ द्वारिका में पहुंचे जहाँ छप्पन करोड़ यादवों के लड़के खेल रहे थे। लड़कों ने कलोल में श्रीकृष्ण के पुत्र परम सुन्दर शाम्ब को स्त्री का रूप बना कर उस के पेट पर एक तवा बाँध दिया जिस में गर्भवती मालूम हो, फिर ऋषि के सन्मुख लाकर कहा कि यह स्त्री गर्भवती है लज्जा से बोलती नहीं पर जानना चाहती है कि इस गर्भ से पुत्र होगा या कन्या। दुर्बासा ध्यान से असल बात समझ गये और क्रोध में आकर शाप दिया कि इस गर्भ से लोहे का मूसर उत्पन्न होगा जो सारे यादवों के बंश का नाश करेगा। यह सुन कर सब लड़के घबरा गये और जो शाम्ब के पेट का कपड़ा खोला तो तवे के बदले उस में से लोहे का मूसर गिर पड़ा। जब यह समाचार श्रीकृष्ण को मिला उस समय वह यादवों की सभा के बीच में बैठे हुए थे। यादवों ने सलाह करके

इजे बिजे थे पौरिया बिसुन पौर दरबान ।
बिन बिचार राकस भये बड़ कलंक है मान* ॥१६॥
रावन सिव का तप किया दीन्हे सीस चढ़ाय ।
दस मस्तक बीसो भुजा जो दीन्हे सो पाय† ॥१७॥

मूसर को लोहार से रेतवा कर समुद्र में छोड़वा दिया और एक छोटा सा टुकड़ा जो नहीं रेता गया उस को भी समुद्र में डलवा दिया। कितने दिन पीछे समुद्र की लहरों से वह रेत किनारे लग कर जम आई और पटेरा (सरपत) रूप हो गई और इसी को ले ले कर प्रभास क्षेत्र से लौटती बेरा यादव लोग नशे की हालत में आपस में लड़ कट मरे। लोहे के बचे हुए टुकड़े को एक मछली लील गई थी जब वह जाल में फँसी तो वह लोहा एक व्याध के हाथ लगा और उसने उस टुकड़े की अपने तीर की गाँसी बनाई। यादवों के संहार के बाद पीपल के पेड़ के नीचे पैर पर पैर रक्खे श्रीकृष्णचन्द्र बैठे थे, दूर से उन के चरण की चमक को मृगा के कान समझ कर बहेलिये ने तीर मारा जिस से उन का शरीर छूट गया।

* बैकुंठ में भगवान के पार्षद जय, विजय द्वारपाल पहरा दे रहे थे, कि ब्रह्मा के मानसिक पुत्र सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार चारो ऋषि जिन की सदा पाँच बरस की अवस्था रहती है भगवान के दर्शन को आये। दोनों द्वारपालों ने उन को लड़का समझ कर बेत से रोक दिया। ऋषियों को इस अपमान पर क्रोध आया और शाप दिया कि तुम दोनों पृथ्वी पर जाकर राक्षस योनि को प्राप्त हो। इसी बीच में विष्णु भगवान मुसकाते हुए वहाँ आ पहुंचे। ऋषि लोग उन को देख कर अपने शाप पर लज्जित हुए और कहा कि तीन जन्म में तुम दोनों का उद्धार हो जायगा। भगवान बोले कि यह हमारी इच्छा से हुआ और ऋषियों को आदर पूर्वक महल में ले गये। फिर यही दोनों द्वारपाल पहिले जन्म में हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष, दूसरे जन्म में रावण और कुंभकर्ण और तीसरे जन्म में शिशुपाल और दन्तवक्र हुए, तिस के बाद बैकुंठ को गये।

† रावण ने शिवजी की भारी तपस्या की और कितनी ही बार अपने मस्तकों को काट काट कर शिवजी के प्रसन्न करने को अग्नि

लंक राज रावन किया खोया बिना बिचार ।
पलक बीच परलय भये लंका के सरदार* ॥१८॥
सीता सतवंती सही रामचंद्र की नार।
रावन दानै छल लई बिनही ज्ञान बिचार* ॥१९॥
पारासर सेवन करै कुटिल कला घट माहिं ।
कन्या सूँ संगम किया ज्ञान बिचारा नाहिं† ॥२०॥

कुंड में होम कर दिया इसी से रामचन्द्र जी जब उस के सिर काटते थे तो तुर्त दूसरे सिर उन की जगह निकल आते थे। इस से यह सिद्ध हुआ कि जो दे सो पावे।

* जब श्रीरामचन्द्र मारीच राक्षस को जो मृग का रूप धारण करके प्रगट हुआ था मारने गये और लक्ष्मण जी भी जिन को रामचन्द्र सीता जी की रक्षा के लिये छोड़ गये थे सीता जी के कटु वचन से रामचन्द्र जी की खोज में चले तो उन्हों ने सीता के चारो ओर एक लकीर खींच दी कि उसके बाहर कदापि पग न धरैं। सीता जी को अकेला पाकर रावण यती का बेष धर कर भीख माँगने आया। सीताजी ने देखा और भीतर से भीख देना चाहा तब यती रूपी रावण बोला कि मेरे गुरू ने बँधी भिक्षा लेने का निषेध किया है। सीताजी धर्म लोप से डर कर भिक्षा देने लकीर के बाहर निकलीं कि रावण ने तुर्त सीता सती को दान करते हर लिया। इसी अत्याचार के प्रभाव से रावण ने लंका को जलवाया और आप मट्टी में मिल गया।

† पाराशर ऋषि ने मछोदरी से नाव में भोग किया (यह कन्या उन्हीं के बीज से मछली के पेट से पैदा हुई थी जो बीज गंगा में नहाते वक़ ऋषि जी का किसी समय में गिर गया था और एक मछली ने खा लिया था) उस मछोदरी ने कहा अभी दिन है लोग देखते हैं तब ऋषि ने अपनी सिद्ध शक्ति से अँधेरा कर दिया आकाश में बादल आ गये। फिर स्त्री ने कहा मेरे बदन से मच्छी की बदबू आती है ऋषि ने बदबू को बदल के खुशबू कर दिया। नतीजा इस संगत का यह हुआ कि व्यास जी उस मछोदरी से पैदा हुए।

उद्दालक के नासकेत गये फूल बनराय ।
पिता बचन जब मेटिया तौ जम नगरी जाय* ॥२१॥
नारद मुनि निरगुन कला ततबेता† तिहुं लोक ।
नर सेतीं नारी भया यह होना बड़ धोख‡ ॥२२॥

* उद्दालक ऋषि के पुत्र नासकेत जी के पिता ने आज्ञा दी कि पूजा के लिये पुष्प जल्द लाओ । नासकेत फूल लेने बन को गये पर देर लग गई और ऋषि जी की पूजा का समय निकल गया । जब नासकेत जी लौट कर आये तो पिता क्रोध से बोले कि क्या तुम यमपुरी होकर आये जो इतनी देर लगाई । यह सुन कर नासकेत पिता को पुष्प इत्यादिक देकर प्रणाम कर यमपुरी को चले गये और अपने तपोबल से उसी देह से लौट आये । उद्दालक ऋषि ने यह देख कर पुत्र को गले से लगा लिया कि उस की योग सिद्धि पूर्व जन्म की है और अपने बेबिचारे बचन पर बहुत पछतावा किया ।

†तत्व ज्ञानी ।

‡ एक समय नारद मुनि ने बैकुंठ में जाकर भगवान से कहा कि महाराज अब मैं ने आप की माया को जीत लिया । भगवान मुस्करा कर बोले कि आप बड़े ज्ञानी हैं आप के लिये माया को जीत लेना क्या बड़ी बात है, इस पर नारद मुनि फूले न समाये । थोड़ी देर पीछे भगवान ने मुनि जी से कहा कि आज कान्यकुब्ज देश के राजा से मिलने को हम जाते हैं आप का जी चाहे तो हमारे साथ गरुड़ पर आप भी सवार हो लीजिये । यह सुन कर नारद भी भगवान के साथ चले । कान्यकुब्ज देश की सीमा पर बन में एक सुन्दर ताल देख पड़ा नारद जी की इच्छा से बिष्णु भगवान वहाँ उतरे और कहा कि आप का चित्त चाहे तो झटपट स्नान पूजा कर लीजिये । नारद जी स्नान के लिये नदी में धसे जब डुबकी लगा कर उछले तो स्त्री हो गये और इस बीच में बिष्णु गरुड़ पर चढ़ कर बैकुंठ को लौट आये । नारद जी स्त्री वेष में बिचारने लगे कि मैं सुन्दर युवा स्त्री हूं मेरे योग्य पति भी मिलना चाहिये । इतने में वहाँ का राजा शिकार खेलता हुआ पहुंचा और स्त्री पर मोहित होकर पूछा कि तुम किस की कन्या हो और इस बन में क्या करने आई । स्त्री

पुत्र बहत्तर बाक छल नर से नारी कीन्ह ।
मान डिंभ छूटा नहीं ततबेता मतहीन ॥२३॥

बोली कि मैं कुछ नहीं कह सकती आप को जो उचित जान पड़े सो कीजिये। राजा उस सुन्दरी को घोड़े पर बैठा कर अपने राजभवन में लाये और अपनी पटरानी बनाया और दोनों बड़े प्रेम से रहने लगे। समय पाकर रानी को १२ पुत्र और १२ कन्या उत्पन्न हुईं फिर उनके बिवाह होकर १२ पतोहूँ और १२ दामाद घर आये और पोते और नातियों की नई टकसार खुली। अब तो रानी को बड़ा अहंकार हुआ कि मेरे बराबर संसार में कौन भाग्यवान हो सकता है। इस तरह रानी-रूप नारद के साठ बरस बीते। उस समय एक दूसरे देश के राजा ने उस राज पर चढ़ाई की और युद्ध में रानी के बारहों पुत्र मारे गये। रात को जब लड़ाई बंद हुई रानी अपने पति को लेकर लड़कों के छिन्न भिन्न मृतक शरीर उठा लाई और अति बिलाप करने लगी कि मुझ सी दुखिया अभागी संसार में दूसरी न होगी। गर्व-प्रहारी भगवान को यह दीन दशा नारद की देख कर दया आई और ब्राह्मण का रूप धर कर प्रगट हुए और रानी को समझाया कि इस रोने पीटने से क्या मिलेगा तुम्हारे पुत्र प्यासे मारे गये हैं इस से जल्द स्नान करके उनको तिलांजलि दो जिस में उन की प्यास बुझै मंत्र हम पढ़ देंगे। ऐसा सुन कर रानी झटपट उसी ताल में स्नान को धँसी जब ग़ोता लगा कर पानी के ऊपर सिर निकाला तो जटा लटकाये मूछ बढ़ाये नारद का रूप हो गई और भौचक्की हो कर इधर उधर देखने लगी। भगवान भी अपना रूप धारण करके नारद से बोले कि मुनिजी देखते क्या हो जल्द अपनी लँगोटी पहिन कर तुंबा उठाओ और मेरे साथ चलो राजा से मिलने को देर होती है। नारद जी दौड़ कर भगवान के चरणों पर गिरे और कहा कि धन्य आप की माया वह आप ही के आधीन है और मैं आप की शरण हूं। भगवान मुस्करा कर बोले कि आप यह कैसी बहकी बातें करते हो अभी तो आपने छिन भर हुआ ग़ोता लगाया था। नारद बोले कि अब रहने दीजिये और मुझे राजा के पास जिस की रानी बन कर साठ बरस साथ रही फिर न लेचलिये।

भृगू भरम मैं बह गये कीन्हा नहीं बिचार।
त्रिभुवन नाथ बिसंभरै लात घात करतार* ॥२४॥
बिन बिचार तन क्या धरे कुटिलाई बस प्रान।
नाहीं सुरत सरीर की ता घट कैसा ज्ञान ॥२५॥
गोपी लुट गइँ कृस्न की अर्जुन सरिखे संग।
लख संधानी बान कर जीते भारी जंग† ॥२६॥
काबा गोपी लूटिया अर्जुन चले न बान।
होनी होय सो होत है समझ बूझ यह ज्ञान† ॥७२॥

---

*एक समय देवताओं में यह बिचार होने लगा कि ब्रह्मा बिश्नु और महादेव में कौन बड़ा है इस परीक्षा लेने को सब देवता और ऋषियों ने भृगुजी को भेजा। भृगुजी पहले अपने पिता ब्रह्मा के सामने आये और प्रणाम नहीं किया जिस पर ब्रह्मा को ऐसा क्रोध आया कि शाप देना चाहा पर मूर्ख लड़का समझ कर रुक गये। फिर भृगुजी कैलाश में महादेव जी के पास गये शिव उनको देख कर बड़े आदर से भेंटने को चले कि भृगु ने पीछे हट कर कहा कि ख़बरदार हम को छुओ नहीं क्योंकि अशुद्ध चिता-भस्म और मुंडमाल धारण किये हो। यह सुन कर महादेव जी क्रोध में भर त्रिशूल लेकर भृगुजी को मारने दौड़े भृगु जी भागते भागते बैकुंठ में जा घुसे तब बचे। बैकुंठ में पहुंचने पर भृगु ने बिश्नु को सुख सय्या पर सोता पाया जिस पर उन्हों ने बड़े ज़ोर से बिश्नु की छाती में लात मारी। बिश्नु महाराज चौंक पड़े और भृगु के चरण पकड़ कर सुहराने लगे और बोले कि कहाँ बज्र से अधिक कठोर मेरा हृदय और कहाँ पुष्प से भी कोमल आप का चरणारबिन्द इस से मेरे जगाने में आप को बड़ा कष्ट हुआ क्षमा कीजिये। भृगुजी ने शरमा कर सिर नीचा कर लिया। फिर देवताओं की सभा में जाकर ख़बर दी कि तीनों देवताओं में बिश्नु सब से बड़े हैं क्योंकि वही शान्त हैं।

†जब कृष्ण भगवान का इस संसार से कूँच करने का समय आया तो अर्जुन से कहा कि आज के सातवें दिन द्वारिका को समुद्र डुबा लेगा

जरना* का अंग

ऐसी जरना चाहिये ज्यौं पृथ्वी तत धीर ।
खोदे से कसके नहीं ऐसा वज्र सरीर ॥ १ ॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं अप† तेज अनूप ।
न्हावे धोवे थूकदे तामस नहीं सरूप ॥ २ ॥
ऐसी जरना चाहिये पवन तत्त परमान ।
कुटिल वचन कोई कहै मानै नहीं अमान ॥ ३ ॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं अगिन तत्त में होय ।
जो कुछ परै सो सब जरै बुरा न बाचै कोय ॥ ४ ॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं गगन तत्त गलतान ।
बुरा भला बाचै नहीं ता में सकल समान ॥ ५ ॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं तरवर‡ के तीर ।
काटै चीरै काठ को तौ भी मन है धीर ॥ ६ ॥
बृच्छ नदी अरु साध जन तीनौं एक सुभाव ।
जल न्हावे फल बृच्छ दे साध लखावे नाँव ॥७॥

इस लिये तुम हमारी स्त्रियों को माल असबाब समेत हस्तिनापुर को ले जावो तुम उनकी रक्षा करने की सामर्थ्य रखते हो। यह सुन कर अर्जुन सब स्त्रियों को लेकर रवाने हुए रास्ते में काबा अर्थात भीलों ने लूटने को घेरा। अर्जुन ने डाकुओं के मारने को अपना गांडीव धनुष चलाना चाहा परन्तु चलाने की कौन कहे उस को चढ़ा भी न सके, वह सामर्थ्य और बल श्रीकृष्णचन्द्र के साथ ही गुप्त हो गये और जिस अर्जुन ने अठारह अक्षौहिणी दल के महाभारत में उसी धनुष बाण से सब को जीता था उन के देखते २ काबों ने सब स्त्रियों को लूट लिया।

*सहना, आपा पालना, लगन। †जल। ‡पेड़।

ऐसी जरना चाहिये ज्यौं घनहर* जल मेह ।
सबही ऊपर बरसता ना दिल दोष सनेह ॥ ८ ॥

दीठी अनदीठी करैं जिन की लूँ मैं दाद† ।
सँग से कभी न बिच्छरूँ खेलूँ आदि अनाद ॥ ९ ॥

दीठी अनदीठी करैं जिन की लूँ मैं दाद ।
सँग से कभी न बिच्छरूँ परम सनेही साध ॥ १० ॥

दीठी अनदीठी करैं जिनकी लूँ मैं दाद ।
सँग से कभी न बिच्छरूँ हर दम नाम अराध ॥ ११ ॥

दीठी अनदीठी करैं सब अपने सिर लेहिँ ।
सँग से कभी न बिच्छरूँ जो मुझ सरबस देहिँ ॥ १२ ॥

दीठी अनदीठी करैं जिन के हूं मैं संग ।
भक्ति पुरातम देत हैं चढ़त नवेला रंग ॥ १३ ॥

दीठी अनदीठी करैं जिनके हूं मैं साथ ।
भक्ति पुरातम देत हैं पीड़ा लगै न गात ॥ १४ ॥

दीठी अनदीठी करैं जिनके हूं मैं तीर ।
बजर टूटते राखहीं पीड़ा नहीं सरीर ॥ १५ ॥

दीठी अनदीठी करैं सो साधू परबीन ।
नाम रते निरबंध हैं छाँड़े दोनौं दीन ॥ १६ ॥

दीठी अनदीठी करैं सो साधू सिर-पोस ।
जो बीतै सो सिर धरैं देहिं न काहू दोस ॥ १७ ॥

दीठी कूँ कहि देत हैं जिनके दिल नहिं धीर ।
ताके सँग हम ना रहैं सो कुहन बेपीर ॥ १८ ॥

---

*गहरा बादल । †न्याव, बख़शिश ।

जरना जोगी जगतगुरु जरना है जगदीस ।
जरना आप अलेख है राखो अपने सीस ॥ १९ ॥
जरना जोगी जगतगुरु जरना अलह अलेख ।
जरना कभी न डिगमिगै जरना नि:चल देख ॥२०॥
जरना जोगी जगतगुरु जरना आप करीम ।
जरना हमरे उर बसै जम नहिं चंपै सीम* ॥ २१॥
जरना जोगी जगतगुरु जरना अलख अलाह ।
जरना कूँ कुरबान जाँ जरना बेपरवाह ॥ २२ ॥
जरना जोगी जगतगुरु जरना रमता राम ।
जरना कूँ कुरबान जाँ जरना है नि:काम ॥२३॥
जरना पूरन ब्रह्म है जरना करता आप ।
जो कछु लखै सो सब जरै जरना है गरगाप॥२४॥
जरै सो अछै निरंजन कहिये जरै सकल में देव ।
जरना जोगी गुरमुखी जरना अलख अभेव॥२५॥
जरना जोगी जुग जुग जिवै जरना प्रलय न जाय ।
जरना जोगी जगतगुरु पद में रहै समाय ॥२६॥
जरना जोगी जुगजुग जिवै जरना प्रलय न होय ।
जरना जोगी जगतगुरु सब्द समाना सोय ॥२७॥
कसनी कसै कपूर ज्यौं करनी करै करार ।
जरना जोगी जगतगुरु आप तरै जग तार ॥२८॥
सिंघ साध का एक मत जीवत ही कूँ खायँ ।
यह जग मुरद-फरोस† है पर द्वारे नहिं जायँ ॥२९॥

*जम अपनी सीमा याने हद पर नहीं रोक सकता । †मुर्दा-परस्त याने मुर्दा पूजने वाले से मतलब है ।

सिंघ साध का एक मत भच्छन करैं बिचार ।
यह जग मुरद फरोस है जाहिं न आन दुआर ॥३०॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं अललपच्छ के अंग ।
अंडा छुटै अकास तें बहुर मिलै सतसंग* ॥३१॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं अललपच्छ के होय ।
सतसंगत सेवत रहा बिछुर गया दिन दोय* ॥ ३२ ॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं चंदन के अंग ।
मुख से कछू न कहत है तन कूँ खात भुवंग ॥३३॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं पारस के होय ।
लोहे से सोना करै कह न सुनावै कोय ॥ ३४ ॥
ऐसी जरना चाहिये ज्यौं पृथ्वी-पति इन्द्र ।
मोती मुक्ता होत है बूँदै स्वाँत समुन्द्र ॥३५॥
जरना बिन जोगी अफल बस्तु न लागै हाथ ।
बिन जरना क्या पाइये भाट बकै पर-बात† ॥३६॥
कथनी से क्या होत है करनी कारन मूल ।
करनी कर जरना जरै लगै पान फल फूल ॥३७॥
कथनी में कुछ है नहीं करनी में रँग लाग ।
करनी कर जरना जरै सो जोगी बड़ भाग ॥३८॥
अनंत कोटि धुन होत है अनंत कोटि झनकार ।
एती सुन जरना जरै सो जोगी करतार ॥३९॥

---

*एक चिड़िया जिसकी निस्बत कहा जाता है कि वह इतने ऊँचे आकाश में रहती है कि वहाँ जब अंडा देती है तो रास्ते में वायुमंडल की रगड़ से अंडा सेय जाता है और बच्चा पैदा होकर पृथ्वी पर पहुंचने के पहिले उसके पंख जम आते हैं और वह रास्ते ही से अपने माता पिता की संगत में लौट जाता है। †दूसरों के गुन ।

अनंत कोटि धुन होत है अनंत कोटि छबि रंग।
एती लख जरना जरै सो साधू सब्द बिहंग ॥४०॥
अनंत कोटि बाजे बजैं अनंत कोटि रबि तेज ।
एती लख जरना जरै सो साधू परसै सेज ॥४१॥
साहब से परचै भये दुनिया बीच अधीन ।
एती लख जरना जरै सो साधू परबीन ॥४२॥
साहब से परचै भये उस दरबार अबाद ।
इहाँ न परगट होत हैं परम सनेही साध ॥४३॥
काँछ* बाँछ* परबन्ध है सतबादी नर सूर ।
साहब के दरबार में जिन्ह मुख रहता नूर ॥४४॥
काँछ बाँछ को कस रहे सतबादी नर एक ।
साँईं के दरबार में रहै जिन्हौं की टेक ॥४५॥
जरना साहब संत है जरना सतगुरु साँच ।
जरना पाँचो तत्त है ऐसो जरना काँछ ॥४६॥
जरै सो अबिचल रहैगा जरै सो परलय नाहिं ।
जरना जोगी ना मरै आवागमन ना जाहि ॥४७॥
जरै सो निरगुन नूर है जरै सो निरगुन तंत ।
जरै सो साहब आप है जरै सो सत भगवंत ॥४८॥
ज्ञान जोग कूँ सब जरै जरै नाम निरधार ।
आठ सिद्धि नौ निद्धि कूँ जरना अधम उधार ॥४९॥
भक्ति मुक्ति कूँ सब जरै जरै जोग बैराग ।
आपा ठहरावै नहीं यह मत पूरन भाग ॥५०॥

*इच्छा ।

दया धर्म को सब जरै जरै सील संतोष ।
मनी कुफर ब्यापै नहीं मिल पद रहै अजोख ॥५१॥
मुख से कहै सो सब जरै सरवन सुनै समोय ।
मन की धारन सब जरै सो जन निःचल होय ॥५२॥
चार मुक्ति जरना जरै बिहिस्त बैकुंठ बिलास ।
काया माया सब जरै सो साधू निज दास ॥५३॥
पुर पट्टन नगरी बसै भेद न काहू देत ।
कीड़ी कुंजर* पोषता अपना नाम न लेत ॥५४॥
पुर पट्टन नगरी बसै निरधारं आधार ।
लख चौरासी पोषता ऐसी जरना सार ॥५५॥
चौरासी भाँड़े गढ़ै खेलै खेल अनंत ।
जाकी जरना देख कर जे कोइ साधै संत ॥५६॥
चौरासी भाँड़े गढ़ै खेलै खेल अपार ।
खान पान सब देत है ऐसा समरथ सार ॥५७॥
कहि न सुनावै और कूँ जो कुछ करै सो लीन† ।
जाकी जरना देख कर संत भये बेदीन ॥ ५८ ॥
परचे कोट अनंत हैँ अजमत‡ कोट अनंत ।
कीमत कोट अनंत है जरना जोगीकंत ॥ ५९ ॥
कच्छ मच्छ बारह§ कुरम‖ सेस धौल¶ फन धार ।
ब्रह्मंड कोट अनंत है रोम रोम की लार ॥६०॥

---

* चींटी से हाथी तक । † गुप्त । ‡ करामात । § बाराह । ‖ कुरम और कच्छ दोनौं एक ही हैं ज़ियादा "दिग्गज" का शब्द लगता है क्यौंकि आठौं दिशा के गज और शेष नाग पृथ्वी को सम्हाले हुए हैं । ¶ सपेद ।

एती लख जरनां जरै कारन कवन अलेख ।
संत सूर जरना जरै कोइ हमरी जरना देख ॥६१॥
धौल गगन गिरनार* है बसुधा† ब्रह्म बिलास ।
हमरी जरना देख कर बस्तु लहै कोइ दास ॥६२॥
निरगुन सरगुन सब कला बहुरंगी बरियाम‡ ।
पिंड ब्रह्मंड पूरन पुरुष अवगत रमता राम ॥६३॥
अनँत कला कलधूत§ हैं अनँत कला परवान ।
ऐसी जरना तू जरै धन कादिर‖ कुरबान ॥६४॥
सब जानत है जगत गुरु कहि न सुनावै कोय ।
ऐसी जरना तू जरै नहीं किसी से होय ॥६५॥
जुगन जुगन के पाप सब जुगन जुगन के मैल ।
जानत है जगदीस तू जोर किये बद-फैल ॥६६॥
करमौं कारन देख कर मौन रहे मुसताक ।
तेरी जरना देख कर संतौं हासिल हाथ ॥६७॥
जरना बड़ जाजुल्ल¶ है जरना नाद समोय ।
ऐसी जरना सो जरै जा तन सीस न होय ॥६८॥
जरना जरै सो जालिम जोगी जरना जालिम जिंद ।
जरना जरै सो आपै आप काल करम नहिं फंद ॥६९॥
परदा कभी न पाड़िये** जे सिर जलै अँगीठ ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे गुनहगार की पीठ ॥७०॥
परदा कभी न पाड़िये जे सिर बलै अँगार ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे गुनहगार सिर भार ॥७१॥

---

*नाम पहाड़ का जिस पर बहुत से सिद्ध रहते हैं । †पृथ्वी । ‡ बरीयाम=सब से श्रेष्ठ । §निर्दोष । ‖शक्तिमान । ¶खूब जलता हुआ । **उघारिये ।

परदा कभी न पाड़िये अपने ही सिर लेह ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे गुनहगार मुख खेह ॥७२॥
परदा कभी न पाड़िये जे सिर आई होय ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे सार झरंता लोह ॥७३॥
परदा कभी न पाड़िये जे जाता है सीस ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे हुकम सरे जगदीस ॥७४॥
परदा कभी न पाड़िये जो जाती है जान ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे नीर छीर कूँ छान ॥७५॥
एती जरना जब जरै सतगुरु से है भेंट ।
बका बकाई करत हैं जिन्ह हद्दी गुरु फेंट* ॥७६॥
जिन के अंतर लगन है जोर कहैंगे राम ।
बका बकाई करत हैं आन झखैं बेकाम ॥७७॥
पृथ्वी का गुन लीजिये औगुन उर नहिं धार ।
जिनके दिल में एक है दूजे को दें डार ॥७८॥
सब्द अनाहद जो रते दूजा नहीं उपाव ।
सुन्न मँडल में रम रहा ना जहँ करम लगाव ॥७९॥
अनहद मंदल† बाजहीं बारह मास अचंभ ।
कबीर दास गरीब कूँ भक्ति दई आरंभ ॥८०॥

निश्चय का अंग

अपने दिल साधू नहीं वा कूँ दरसा साध ।
भैंस सींग से जानिये गत कुछ अगम अगाध‡ ॥१॥

*जो संसारी गुरू की लपेट में रहैंगे वह बाद बिवाद में जन्म गँवावने । †तबला, मृदंग । ‡देखो नोट पृष्ठ २३ ।

उसके मन की फुरत है अपने मनकी नाहिं ।
गनिका चढ़ी बिमान में अजामील की बाँहि* ॥२॥
तीन धात हैं पिता की चार धात हैं माय† ।
सिष स्वामी इकसा मिलै हंसा पहुंचै ठाँय ॥३॥
निःचय ऊपर नामदेव पाहन दूध पिलाये ।
भैंस सींग में साहब आये नाम रतन धन पाये‡ ॥४॥

---

*अजामिल के कुकर्मी होने और अंत में नारायण नाम के प्रताप से तर जाने की कथा नोट पृष्ठ २६ में लिखी है परंतु उसकी बदौलत उसकी वेश्या का भी उद्धार होने का प्रमान कहीं नहीं प.या जाता ।

†बालक में पिता और माता दोनों के अंश से तीन तीन बस्तु की उत्पत्ति लिखी है—पिता के अंश से हड्डी रग और मज्जा (या गूदा) और माँ से बाल लोहू और माँस, चौथी बस्तु माँ के अंश से कौन सी बनी है इस का प्रमान हम को कहीं नहीं मिला । महात्मा चरनदास जी ने पिता के अंश में रग की जगह बीर्ज लिखा है और माता के अंश में बाल की जगह त्वचा ।

‡नामदेवजी की प्रचंड भक्ति जगत-प्रसिद्ध है । यह नामदेव जी की बिधवा कन्या के उदर से भगवंत की दया दृष्टि से हज़रत ईसा की भाँत जनमे थे । इन के नाना भी बड़े भक्त और माता पूरी सती और प्रेमी थीं । नामदेवजी के बिषय में बहुत से चमत्कार लिखे हैं । लड़कपन ही से इन की परमार्थ में रुचि थी और उसी अवस्था में एक बार उन के नाना ठाकुर जी की सेवा उनके सपुर्द कर के बाहर गये । जब नामदेवजी ने ठाकुर जी के सामने दूध धरा और उन्होंने न पिया तो इन्हों ने समझा कि हम से अप्रसन्न हैं और तीन दिन तक मंदिर में बिना अन्न पानी के दुखी पड़े रहे अंत को ठाकुर जी ने कटोरा उनके हाथ से लेकर दूध पी लिया और थोड़ा सा उनको प्रसाद दिया ।

किसी मेले के समय में नामदेव जी अपना जूता कमर से बाँध कर पंढरपुर के ठाकुरद्वारे में दर्शन को गये संजोग से जूता किसी ने देख लिया और इन को मार कर मंदिर से निकाल दिया । बेचारे मंदिर

निःचय ही से देवल फेरा पूजो क्यौं न पहारा ।
नामदेव दरवाजे बैठा पंडित के पिछवारा ॥५॥
निःचय ही से गऊ जियाई निःचय बच्छा चूगे ।
देस दिसंतर भक्ति गई है फिर को लावे भूगे* ॥६॥
गोपीचन्द भरथरी जोगी निःचय राज बिराजी† ।
निःचय होय तो नेड़े निपजै क्या पंडित क्या काजी॥७
निःचय सेऊ सीस चढ़ाया चोरी संत सिधारे ।
बनिया कूँ जहँ पकड़ लिया है करदे‡ सीस उतारे§॥८॥
पिता समन और माता नेकी जिन के निःचय भारी
जहाँ कबीर कमाल फरीदा भोजन की भइ त्यारी§ ।९

के पीछे जा कर दर्शन न मिलने से ब्याकुल होकर बैठ गये और वहाँ बिनती करने लगे उसी दम मंदिर जड़ से फिर कर द्वारा उन की ओर हो गया ।

*एक बार बादशाह ने उनको पकड़ बुलाया और कहा कि तुम ने सिद्धाई का ढ़ुचर फैला रक्खा है हमारी गाय मर गई है उसको जिला दो नहीं तो क़तल कर डाले जावगे । नामदेवजी ने बहुत उज़र किया कि मैं तो एक नीच छीपी हूं मुझ में कोई गुन नहीं है— पर बादशाह ने न माना आख़िर को महात्मा जी ने भगवत चरन में बिनती की और गाय जी उठी ।

एक बार घर में आग लगी तो नामदेवजी और सामान जो घर के बाहर रक्खा हुआ था उसको भी आग में मालिक की मौज से उस का लगना समझ कर डालने लगे । भगवान ने उन का छप्पर का घर दूसरा बिचित्र रीति से आप रच दिया ।

†राजा भर्थरी बड़े त्यागी और जोगी हुए और राजा गोपीचन्द उनके भांजे उनके चेले बने ।

‡ छुरी से । §देखो नोट पृष्ठ १५-१६

सेऊ के धड़ सीस चढ़ाया मीन मेख नहिँ कोई ।
हाज़िर नाजिर मिले बिसंभर ऐसा निःचय होई१०
तपिया के तो जकतक* कीना लोदिया के घर आये ।
ताड़ी घाल लिये परमेसर निःचय हाथ बँधाये ॥११॥
निःचय ऊपर बालद आई और केसो बनजारा ।
नौलख बोरी लदा लदीना कासी नगर मँझारा†१२
निःचय पंडा पाव‡ बुझाया जगन्नाथ के माहीँ ।
अटका फूट पड़ा पाँवन पर अजहूं बात न भाई१३
कासी तज कर मगहर पहुंचे ऐसा निःचा कहिये ।
सतगुरु साख समझ ले भाई धीर पकर थिर रहिये§१४
कासी मरे सो जाय मुक्ति कूँ मगहर गदहा होई
पुरुष कबीर चले मगहर कूँ ऐसा निःचा जोई§१५
कासी के तो पंडित कूकँ मगहर मरो न भाई ।
वा तो पृथ्वी सूधी नाहीं त्रिसंक पड़ो बिल्लाई§१६।
कासी तज मगहर कूँ चाले किया कबीर पयाना ।
चादर फूल बिछेही छाँड़े सब्दे सब्द समाना॥ १७

*झगड़ा । †देखो नोट पृष्ठ ३४-३५ । ‡पावक=आग [जगन्नाथजी के मंदिर में आग लग जाने से वहाँ का रसोइया जलने लगा कबीर साहब ने काशी में धरती पर पानी गिरा कर आग बुझा दी] ।

§कबीर साहब काशी से जाकर मगहर में रहे थे और वहीं शरीर त्याग किया । मगहर को मग्गह देस बोलते हैं और लोगों का विश्वास है कि वहाँ मरने से गधे की जोनि मिलती है क्योंकि गुरुद्रोही राजा त्रिशंकु का शरीर जो अधर में लटक रहा है उस की छाया उस भूमि पर पड़ने से वह अपवित्र हो गई है ।

॥कबीर साहब के अंतकाल के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि हिन्दुओं ने इन के मृतक शरीर को जलाना और मुसलमानों ने गाड़ना चाहा इस पर बहुत झगड़ा हुआ अंत को चद्दर उठा कर देखा तो

मगहर में तो कबर बनाई बिजलीखान पठाना।
कासी-चौरा उड़ गया भौंरा दूनौं दीन दिवाना॥१८॥
कनक जनेऊ कंध दिखाया है रैदास रँगीला ।
धरे सातसै रूप तास कूँ ऐसी अद्भुत लीला* १९
पीपा तो दरिया में कूदे ऐसा निःचा कहिये ।
मिले बिसम्भर नाथ तासु कूँ झूठी भक्ति न गहिये†२०
सेना के घर साहब आये करी हजामत सेवा ।
संतौं की तो सरधा राखी पारब्रह्म निज देवा‡ २१
नरसी की तो हुंडी झाली कागज सीस चढ़ाया ।
ध्योती का तो ब्याह भया जब भात भरन कूँ आया§२२

मृतक स्थान पर शरीर नदारद था फूल और खाट पड़ी थी (कितने खाट की जगह पान कहते हैं) तब हिन्दुओंने फूल लेकर मगहर में उन की समाधि बनाई और मुसलमानों ने जिन में कबीर साहब का जेठा चेला बिजलीख़ाँ पठान प्रधान था क़बर बनाई। काशी में उसी समय एक भौंरे के कहने से कबीर साहब के गुरमुख शिष्य धर्म्मदासजी ने कबीर-चौरा बनाया।

*देखो नोट पृष्ठ ३४। †देखो नोट पृष्ठ ३३। ‡देखो नोट पृष्ठ ३३।

§नरसी जी गुजरात देश के बासी थे जिन की प्रचंड भगवत भक्ति प्रसिद्ध है। इन की महिमा ग्रंथौं में बहुत कुछ बर्नन की है। दो चमत्कार जो इस कड़ी में लिखे हैं एक तो यह है कि जब नरसीजी दान देते देते कंगाल हो गये थे एक समय साधुओं ने आकर इन को घेरा कि द्वारिका की जात्रा के लिये ख़र्च दो। नरसीजी ने अपनी नादारी हज़ार कही पर जब साधुओं ने पिंड न छोड़ा तो हुंडी द्वारिका को भगवान के ऊपर साँवल साह के नाम से लिख दी। वहाँ ईश्वर ने आप साँवल साह का रूप धर कर उन को हुंडी का दाम चुका दिया। दूसरे यह कि जब उन की बड़ी बेटी के लड़का हुआ अर्थात नरसीजी के दोहता पैदा हुआ तो छठियारे के लिये कुछ न था भगवान ने आप उस रसम को अदा किया।

तिरलोचन के भये बिरतिया ऐसी भक्ति कमाई ।
संतौं के तो नाल फिरे अरु तीन लोक ठकुराई* २३॥
जीवन मूल बिसम्भर† साहब आतमदेव बिनानी‡।
जहँ जहँ भीर परी संतौं कूँ छाना दूध अरु पानी२४
प्रहलाद भक्त कूँ दई कसौटी चौरासी बरताया ।
नरसिँह रूप धरे नारायन खंभ फार कर आया§ २५

*तिरलोचनदेव वैश्य कुल के भक्त थे इन को साधु सेवा में सहायता के लिये एक नौकर की बड़ी खोज थी और मन का आदमी नहीं मिलता था आख़िर को भगवान तीन लोक के ठाकुर अर्थात स्वामी नौकर का भेष धर आप इन की चाकरी में रहे ।

†बिश्वंभर । ‡ बिज्ञानी ।

§प्रहलाद भक्त का पिता हिरण्य-कश्यप बड़ा ईश्वर-द्रोही था और अपने बेटे को राम नाम लेने से रोकता था । इसी अकस से प्रहलाद को सारे दंड चौरासी के दिये, अर्थात पहाड़ से गिराया, ज़ंजीर से बाँध कर नदी में डलवाया, हाथी से रुँदवाना चाहा, ज़मीन में गड़वाया, अंग में साँप लिपटवाया, तोप पर रक्खा, सिर पर आरा फेरा, उस्टाँ टाँग कर तीर चलाये, चिता बना कर जलवाया (देखो होलिका की कथा नोट पृष्ठ ६४), बिष पिलाया और आख़िर को खंभे से बाँध कर खड्ग से सिर काट डालना चाहा तब ईश्वर ने नरसिंह रूप धर कर हिरण्य-कश्यप का पेट नख से फाड़ कर उस का बध किया । इस अवसर के भयानकपन को नीचे लिखे हुए दंडक छंद में इस तरह लिखा है—

गगड़ गड़गड़ान्यो खम्भ फाट्यो थरथराय निकस्यो नरनाहर को रूप अति भयानो है । ककट कटकटावै दाढ़ै दृग्गन लपलपावै जीभ अधर थरथरावै मोह ब्योम व्याप्य मानो है । भभरि भरभराने लोग हहरि-हर पराने धाम थथरि थरथराने अङ्ग चिति चाहत खानो है । कहत रघुनाथ कोपि गर्जे नरसिंह जबै प्रलय को पयोधि मानो तड़पि तड़-तड़ानो है ॥

ध्रू का ध्यान अमान अगोचर डिगै न डोलै भाई ।
सप्त पुरी पर तारी लागी कोटि कल्प जुग जाई* २६
नारद पुंडरीक और ब्यासा गोरख जनक बिदेही ।
द्वादस कोट बंध जिन तोरी भक्ता परम सनेही† ॥२७॥
सुल्तानी बाजीद फरीदा देत तत्त गलताना ।
जब राजा कूँ नाम दिया जब सब्दै सब्द समाना† ॥२८
कहा बखानूँ कोटिन निर्नय राजा पारँग कीन्हा ।
अकल अजीत उदित अध्यातम गोरख से परबीना† २९
बसिष्ट बिश्वामित मद माते मन माया जिन जीते ।
कागभसुंड डंड नहिं जाके अवगत आनंद चीते† ॥३०॥
लोमष ऋषि और मारकंड को ध्यान लगा वा पद में ।
अबिनासी से अरस परस है सुरत बसी अनहद में† ३१
मोरद्धुज तामरधुज राजा अम्बरीक अनुरागी ।
हरीचन्द पद हाजिर नाजिर मन से माया त्यागी† ३२
द्रोपद सुता के चीर बढ़ाये पीतंबर पहराना ।
अंत भये कछु वार न पारा दूसासन हैराना‡ ॥३३॥
पंडों के जग अस्वमेध में सुपच बजाया संख ।
द्रोपदी के दिल में राखी काढ़ी मन की बंक§ ॥३४॥
नि:चा ऊपर नाम का कहा ज्ञान कहा ध्यान ।
नि:चा खेत निपाइया काँकर बोई जान‖ ॥३५॥

*देखो नोट पृष्ठ ३२ ।
†भक्तजन, ऋषि, मुनि और राजाओं के नाम ।
‡देखो नोट पृष्ठ ८४ ।
§देखो नोट पृष्ठ ५५-६६ ।
‖देखो नोट पृष्ठ ३५ ।

काम लुब्ध पाखँड रचा धरे बिसंभर रूप।
  ऐसा नि:चा चाहिये मारे राजा भूप ॥३६॥
सील सँतोष बिबेक बुध दया धर्म इक तार।
  बिन नि:चै पावै नहीं साहब का दीदार ॥३७॥
सत बोलै साँची कहै दिल में परै न बाँक।
  मुसकी घोड़ा सेत होय अकल अकीनै झाँक ॥३८॥
नि:चै गोकुल गूजरी बिनही बेड़े पार।
  पंडित के दिल दुई थी गुरवा रह गये वार* ॥३९॥
ज्यों मीरा राठौर को राखी नहीं अधार।
  पकर्यो लोहा ज्ञान को कोटौं कटक सँघार ॥४०॥
मीरा हाथ सितार था पद गावै लौ लाय।
  पत्थर की थी पर्तिमा जा में गई समाय† ॥४१॥

*श्रीकृष्नकी आज्ञा से गोपियाँ दुर्बासा ऋषि के लिये भोजन लेकर जमुना पार गई थीं जब कि जमुना जी ने फट कर जाने का रास्ता दे दिया ॥

†मीरा बाई मेरते के राजा की बेटी और चित्तौड़ के राना की पतोहू थीं। इन की अनुपम भक्ति संसार भर जानता है। देवी की पूजा करने से इनकार करने पर इन को सास ने अपने घर से अलग दूसरे घर में रख दिया जहाँ वह बेरोक टोक भगवत-भक्ति और साध सेवा में रात दिन लगी रहती थीं। यह बात राना को न सुहाई ख़ासकर साधुओं की बेधड़क संगत करना। राना ने मीरा बाई को रोकने के लिये कोई जतन उठा न रक्खा लेकिन जब कुछ बस न चला तो चरनामृत के नाम से घोर बिष का प्याला उन को भेजा। मीरा बाई उसे सिर पर चढ़ा कर पीगईं और कुछ असर न हुआ। कहते हैं कि भगवान इन के साथ साक्षात बैठ कर चौसर खेलते थे। मीरा बाई वृन्दाबन गईं और वहाँ जीव गोसाईं से मिलना चाहा। गोसाईं जी ने कहला भेजा कि हम स्त्रियों से

भवन तेग थी काठ की जैसे चमकी बीज ।
ओटनहारा को नहीं अवगत अलख अछीज* ॥४२॥
भवन गमन गगनै किया घोरे सुधा गुलाम ।
ज्यौं मिसरी साहब मिले बरछी लेह लगाम ॥४३॥

नहीं मिलते जिस पर मीराबाई ने जवाब दिया कि मैं तो वृन्दाबन में सिवाय श्रीकृष्ण के सब को सखी रूप जानती थी आज मालूम हुआ कि उन के और भी पट्टीदार हैं । यह सुन कर गोसाईं जी अति लज्जित हुए और मीरा बाई के दर्शन को आप नंगे पाँव दौड़े आये । वृन्दावन से मीरा बाई फिर चित्तौड़ लौटीं पर राना की बुद्धि वैसीही भ्रष्ट पाकर द्वारिका में जा बसीं । चित्तौड़ में मीरा बाई के छोड़ते ही ऐसे उपद्रव खड़े हुए कि राना डरा कि मीरा बाई को दुख देने के कारन ईश्वर का कोप हुआ और घबरा कर उन को बुलाने के लिये आदमी भेजे । जब वह न आईं तो कई ब्राह्मन भेजे जो मीरा बाई के द्वार पर धरना बैठे अंत को मीरा बाई रनछोड़ जी से बिदा होने को उन के मंदिर में गईं और भक्तमाल में लिखा है कि मूर्ति के सन्मुख एक प्रेम का पद जिस की अंतिम कड़ी यह है–"मीरा के प्रभु गिरिधर नागर मिलि बिछुड़न नहिं कीजै" गाया कि मूर्त्ति में समा कर लुप्त हो गईं और सिवाय इस के कि रनछोड़ जी की मूर्ति पर पीताम्बर की जगह मीरा बाई की सारी देख पड़ी और कोई चिन्ह उन का बाक़ी न रहा ।

*भवन भक्त, जाति के राजपूत चौहान, राना के एक भारी कामदार थे । एक बेर राना के साथ शिकार में एक हिरनी के पीछे घोड़ा डाला और उस को तलवार से मारा । वह हिरनी गाभिन थी उस का बच्चा भी दो टुकड़े हो गया । भवन जी को बड़ी ग्लानि आई और उस दिन से प्रन किया कि लोहे की तलवार के बदले काठ की तलवार रखना । एक चुगलख़ोर ने राना से कह दिया, राना ने इन को तलवार दिखलाने को कहा । जब इन्हों ने म्यान से काठ की तलवार खींची तो वह फ़ौलाद की हो कर बिजली की नाईं चमकी कि सब की आँखें चौंधिया गईं । भक्त का ओटनहार अर्थात रक्षा करने वाला भगवंत आप ही है ।

करनहिं जाँचे आन कर मंगत किया जुहार ।
मो कूँ पारस दीजिये दालिद्दर बेडार* ॥४४॥
करन तोहि कूँ दसत में सोच परी बड़ भीर ।
धरती कूँ खोदन लगा मेटी जन की पीर* ॥४५॥
पारस ठहका आन कर लगी तीर की भाल ।
परसत ही सोना भया कीन्हा करन निहाल* ॥४६॥
ऐसी नि:चा चाहिये पारस पूरन हाथ ।
जो रंगे सोई रँगे साँईं जेही दात ॥ ४७ ॥
गगन मँडल हुन बरखिया तीन बेर तत सार ।
सीता लछमन राम की मध मूरत करतार ॥४८॥
सो मूरत क्यूँ ना पूजहीं पत्थर ढेला डार ।
सीता लछमन राम के लीजे चरन जुहार ॥४९॥
ग्यारह रुद्रों पर तपै द्वादस मह्ठ मिलाप ।
सूछम मूरत सूँरते ब्रह्म सब्द गरगाप ॥५०॥

---

*कथा है कि राजा करन सवासी मन सोना हर रोज़ दान किया करते थे एक दिन भगवान उन की जाँच करने को मँगता के भेष में आये और राजा से ताज़ा सोना माँगा [गरीबदासजी ने पारस पत्थर का माँगना लिखा है] राजा का प्रन था कि कभी किसी का सवाल ख़ाली न जाय इस से बड़ी फ़िकर में पड़ कर जंगल को निकल गये और सोँच में धरती को तीर से कुरेदने लगे । भगवान को उन की दया देख कर करुना आई और तीर की गाँसी के तले पारस पत्थर रख दिया जिस के छूते ही गाँसी सोने की होगई और राजा ने निहाल होकर पारस पत्थर को धरती में से निकाल लिया और ताज़ा सोना बन गया ।

कोट धुजा* किस काम का सूम सकल है बाल ।
असी गंज† बाँटे नहीं परा तासु पर ज्वाल‡ ॥५१॥
दिल दानी है तासुका सदाबरत मन माहिं ।
पृथ्वी पारस हो रही हुन बरषी जिस ठाहिं ॥५२॥
सुअर गऊ कूँ खात है बिसमिल§ करै हमेस ।
दोऊ दीन दोजख गये जम तेहि पकरे केस ॥५३॥
करदी करद|| चलावहीं जीव जोनि पर जाय ।
नैन बैन सूँ मिलि रहा छाती परदे पाय ॥५४॥
यह तो काफ़िर करम है धरम नहीं यह पाप ।
द्रोही नबी रसूल के डूबैंगे गरगाप ॥ ५५ ॥
जिव हिंसा जो करत हैं या आगे क्या पाप ।
कंटक जूनि जहान में भँटा सिंह अरु साँप ॥५६॥
आतम प्रान उधार ही ऐसा धरम न और ।
कोटि जग्ग असुमेध फल सब्द समाना भौंर ॥५७॥

साध महिमा का अंग

धन जननी धन भूमि धन धन नगरी धन देस ।
धन करनी धन सुकुल धन जहाँ साध परबेस ॥१॥
जा उदर साधू बसै सो उदर है पाख¶ ।
सनकादिक से उपज ही सुकदे बोले साख** ॥२॥

---

*पहिले क़ायदा था कि पूरे करोड़ रुपये पर एक फरहरा खड़ा कर दिया करते थे जो निशान करोड़पती होने का समझा जाता था । †ख़ज़ाना । ‡ज़वाल । §ज़िबह । ||छुरी । ¶ पाक ।

** कथा है कि एक समय में महादेव जी पारबती जी को एकान्त में तत्व-ज्ञान का उपदेश दे रहे थे पासही एक पेड़ था जिसमें खोड़र

गंदा अंडा गरद मिल परा बिरिछ के खोढ़ ।
संकर तत्त सुनाइया पारबती गई पौढ़** ॥ ३ ॥
धन संकर धन गोरजा धन सुकदे धन ब्यास ।
धन जननी सुकदेव की द्वादश बरस बिलास** ॥४॥
जहाँ साध जन औतरे तहाँ भक्ति का भेव ।
गोरख उपजे ज्ञान जब भभूत दई महदेव* ॥ ५ ॥
सूया अनसूया मिले तीनौं देवा ध्यान ।
सब्द स्वरूपी औतरे दत्तात्रे परमान† ॥ ६ ॥

था खोखली पेड़ी में एक गंदा अंडा सुग्गे का पड़ा हुआ था, वह उस चरचा के प्रताप से सजीव होकर फूटा और बच्चा बन कर बड़ा हो गया । कथा के बीच में पारबती जी को औंघाई आगई तब वह सुग्गा जो कथा को सुन रहा था पारबती जी की जगह हुंकारी भरने लगा जिस में महादेव जी कथा को बंद न करदें । जब कथा समाप्त हुई तो महादेवजी ने पारबती जी को सोता देख कर पूछा कि तुम तो सो गई थीं हुंकारी कौन भरता था । पारबती जी ने कहा मैं नहीं जानती । इस पर महादेव जी ने क्रोध में भर कर अपना त्रिशूल छोड़ा । सुग्गा भागा और त्रिशूल ने उसका पीछा किया । रास्ते में ब्यास जी की स्त्री सूर्य्य की पूजा कर रही थीं और उनका मुंह खुला हुआ था सुग्गा उनके मुंह में होकर पेट में समा गया और बारह बरस तक उनके पेट में रहा क्योंकि त्रिशूल को उस स्त्री के बध करने का अधिकार न था । जब ब्यास आदिक ने जाकर महादेव जी से बिनती की तब शिव जी ने त्रिशूल को फेर लिया और सुग्गा शुकदेव जी के रूप में ब्यास जी की स्त्री के उदर से निकल कर जंगल को चला । ब्यासजी उनके फेर लाने को पीछे दौड़े तो शुकदेव जी ने उनको ज्ञान सुनाया ।

*गोरखनाथ जी जोगी महादेव के उपासक थे ।

†अत्रय ऋषि की स्त्री अनसूया के अंतर में ध्यान करते समय त्रिदेव ने अपना अंश डाल दिया जिस से दत्तात्रेयजी उतपन्न हुए । इन्हों ने चौबीस गुरू धारन किये ।

संत सुरसरी चलत हैं मारू देस बहंत ।
बागड़ मंझ बिलास होय नदी सुरसरी संत ॥७॥
साध नदी दो अगम नग इन सम तुल नहिं और ।
साध भक्ति के खंभ हैं नदिया बिरछा मौर ॥८॥
साँई सरिखे संत हैं यामें मीन न मेख ।
परदा अंग अनादि है बाहर भीतर एक ॥ ९ ॥
साँई सरिखे देखले बरतावैं जे कोय ।
सप्त कोस जल चढ़ गया जहाँ साध मुख धोय* ॥१०॥
सकल मेदिनी† भर गई सब्द न पूटा‡ फेर ।
सप्त कोस क्या बात है डूबे मेरु सुमेर ॥ ११ ॥
ऐसे साधू संत जन पार ब्रह्म की जात ।
सदा रते हरि नाम सूँ अंतर नाहीं घात ॥ १२ ॥
साध अगाध अपार जन परमानँद सूँ प्रीत ।
कहवत के तौ संत हैं अवगत अलख अतीत ॥१३॥
साध सगे हैं जगत में संत सगाई साँच ।
साधू ढूँढ़न नीकलूँ बहु बिधि काछूँ काछ ॥१४॥
साध समुंदर गगन गत सुन्न समाने सोय ।
परमानँद के परमहंस एक कहूं की दोय ॥ १५ ॥
साध समुंदर लाल नग संत हीरौं की खान ।
सतगुरु बेदी बाँचहीं सुनतेही परवान ॥ १६ ॥

---

*गिरनार पहाड़ जहाँ अच्छे साधू रहते हैं वहाँ से सात कोस नीचे हनुमान धारा गिरती है । †पृथ्वी । ‡पीठ ।

महिमा कीजै संत की तन मन धन सब देहि ।
सिर माँगे टालो नहीं मोरद्धज लखि लेहि* ॥१७॥
संत सलहली सेज के जिन मैं कैसी भिन्न ।
साहब साँईं उतरे नाम धराया जन्न† ॥ १८ ॥
संत सलहली सेज के जिन के कैसी भिन्न ।
साहब परगट संत हैं जिन का एकै मन्न ॥ १९ ॥
मोड़ अमोड़ं मगन है हद बेहद मैं सैल ।
साहब साधू पाक है उपजी बाजी मैल ॥ २० ॥
माल मुलक सब धूर है बिन साँईं के नाह‡ ।
दुनिया अलग बिजोग है साधू साहब माँह ॥२१॥

*राजा मोरध्वज की प्रचंड भक्ति की बहुत सी कथा हैं । जिस बात का यहाँ ज़िकर है वह यह है कि श्रीकृश्न अर्ज्जुन को राजा मोरध्वज की असदृश भक्ति की लीला दिखलाने को आप एक बूढ़े ब्राह्मन का रूप धर कर और अर्ज्जुन को अपना पुत्र बना कर राजा के घर आये और कहा कि रास्ते में लड़के को बाघ ने पकड़ा था और हमारे बहुत बिनती करने पर इस शर्त पर छोड़ा कि राजा मोरध्वज का दहिना अंग हमारे खाने को लाओ । राजा ने जवाब दिया कि बड़े भाग मेरे कि यह निकाम देह साध सेवा में काम आवै और बूढ़े ब्राह्मन के कहने मुताबिक़ अपनी रानी और कुंवर को आज्ञा दी कि आरे से चीर कर सिर से पाँव तक दो टुकड़े कर दो । आरा उठा कर राजा के सिर पर रक्खा गया और एक ओर से रानी और दूसरी ओर से राजकुंवर चलाने लगे कि इस में राजा की बाँईं आँख से एक आँसू टपक पड़ा । इस पर बूढ़े ब्राह्मन बोले कि यह दान अब अशुद्ध हो गया क्योंकि तुम रोये जो चिन्ह दुःख और खेद का है । राजा ने उत्तर दिया कि ऐसा कदापि नहीं है बरन बाँईं आँख अपनी अभाग्यता पर शोक करती है कि हमारी ओर का अंग साध सेवा में न लगा । इस पर श्रीकृश्न ने प्रसन्न होकर निज रूप से दर्शन दिया ।

†भक्त । ‡नेह ?

माल मुलक सब घूर है पाक परम गुरु संत ।
जिन सूँ साहब निकट है तिन में कैसा अंत ॥२२॥
जिन में नाहीं अंतरा अरस परस परवान ।
साहब साधू एक हैं दुनिया दूजी जान ॥ २३ ॥
संत सामना संत में दुनिया है सो न्यार ।
जिन में दूजी भिन्न क्या राते सिरजनहार ॥२४॥
साध समुंदर कमल गति माहँ साँई गंध ।
जिन में दूजी भिन्न क्या सो साधू निरबंध ॥२५॥
कमल न डूबे जल चढ़ै माहँ मधुकर* बास ।
जैसे चंद कमोदिनी यूँ साँईं निज दास ॥ २६ ॥
नौ नेजे जो जल चढ़ै कमल न भींजै गात ।
माहँ ज्ञान सुगंध सर† आदि अंत का साथ ॥२७॥
नौ नेजे जो जल चढ़ै बूँद न लागै पान ।
ऐसे साधू अगम गत संसारी परवान ॥ २८ ॥
कमल पत्र की बासना ताको कवन सरूप ।
महकै गंध अपार गति सूँघत बड़े बड़े भूप ॥२९॥
भूप संत साधू कहे जुगन जुगन के राव ।
सप्त पुरी नहिं बासना जिनके भक्ति पसाव‡॥३०॥
मन मधुकर काया केवड़ा महकत गंध अजोख ।
हूंठ हाथ गढ़ अगम है रच राखे सब लोक ॥३१॥
स्वर्ग सलेमा§ बास है तिरबेनी के घाट ।
आगे अगम अगाध गति अवर नहाहीं आठ‖॥३२

*भँवरा । †तालाब । ‡क़दर । §बुलाला । ‖पाँच तत्व और तीन गुन ।

संत सरोवर हंस हैं भच्छन करैं बिचार ।
पुहुप बासना ज्यूँ रहैं राई रिंच न भार* ॥ ३३ ॥
साध कमल मध बासना ऐसा हलका अंग ।
मैल मनोरथ ना रहै निरमल धारा गंग ॥ ३४ ॥
साध सँगत हरि भक्ति बिन कोई न पावै पार ।
निरमल आदि अनादि है गंदा सब संसार ॥३५॥
साध साध सब कोउ कहै साध सुमत से जान ।
कुमत कमावे जीव है जैसे जल पाखान ॥ ३६ ॥
ज्यूँ जल में पाखान है भींजत नाहीं अंग ।
चकमक लागे अगिन है कहा करे सतसंग ॥ ३७ ॥
जहँ महिमा है साध की चरन कमल से हेत ।
जुगन जुगन उर मैं रखूँ ध्रू प्रहलाद सकेत ॥३८॥
साध संत के ऐन† में बसैं हुजूर अमान ।
जा घर निंदा साध की सो घर डूबे जान ॥ ३९ ॥
लख छल छिद्दर मैं करूँ अपने संतों काज ।
हिरनाकुस ज्यूँ मारहूँ नरसिँघ धरहूं साज‡ ॥४०॥
स्वर्ग पतालों सकल में है अनुरागी राम ।
नरसिँघ होकर अवतरे प्रहलाद भक्त के काम‡॥४१॥
जहँ जन की महिमा सुनूँ तहँ मैं गमन करंत ।
वो तौ नगर अमान है जहँ मेरे प्यारे संत ॥ ४२ ॥

---

*जैसे फूल में सुगंध जिस का रत्ती भर बोझ नहीं होता । †घर, आँख । ‡देखो नोट पृष्ठ ८८ ।

साध साध सब कोउ कहै साध समुंदर तीर ।
अवगत की गत को लखै मिल गये नीर कबीर* ॥४३॥
नीर कबीर निरंजनं अंजन धरे सदेस† ।
अंजन मंजन माँजिये जब होवे परबेस ॥ ४४ ॥
साध कहावन कठिन है मग पर धरे न पाँव ।
सहँगी‡ संगत है नहीं चढ़ो नाम की नाव ॥ ४५ ॥
साध कहाया जगत में परचे पड़े न प्रान ।
जग सोभा जब होयगी मिलै अलख निरबान ॥४६॥
सब्द मिलावा अंग रस परसन है दीदार ।
रोम रोम तारी लगै झिलमिल किरन अपार ॥४७॥
बरषै किरन अबरन गत रिमझिम रिमझिम रंग ।
जो देखै सोई कहै अरस परस परसंग ॥ ४८ ॥
संत सकल के मुकट हैं साँईं साध समान ।
बड़ भागी वे हंस हैं जिन संतों नाल पिछान ॥४९

॥ राग-धुनि ॥

आज मेरे आये संत सुजान ।
तन मन धन वारूँगी प्रान ॥ टेक ॥
चरन कमल रज डारूँ सीस ।
मानो आप मिले जगदीस ॥ १ ॥

---

*कबीर साहब नौजनमतुआ बालक की दशा में काशी के लहरतारा तालाब में बहते मिले थे [देखो जीवन-चरित्र कबीर शब्दावली भाग १ में]। †निकट। ‡सस्ती, सहज।

संत की महिमा कही न जाय ।
अठसठ तीरथ चरनौं माँय ॥ २ ॥
संत की महिमा अपरमपार ।
पूरन ब्रह्म मिले करतार ॥ ३ ॥
संत की महिमा अगम अगाध ।
नारद से उधरे प्रहलाद* ॥ ४ ॥
ध्रू भैंटे नारद निर्वान ।
अमरापुर पर रचे बिमान* ॥ ५ ॥
संत की महिमा अगम अगाह ।
बूड़न तैं राखे गज ग्राह† ॥ ६ ॥
संत की महिमा निस्चल थीर ।
द्रौपद सुता की बढ़ गई चीर‡ ॥ ७ ॥
संत की महिमा अधिक सुमेर ।
भिलनी के जूठे खाये बेर§ ॥ ८ ॥
संत की महिमा निस्चल अंक ।
बालमीक का बाजा संख‖ ॥ ९ ॥
संत की महिमा अमन अमान ।
देखो गनिका चढ़ी बिमान¶ ॥ १० ॥

*प्रहलाद भक्त की कथा नोट पृष्ठ ८८ में और ध्रू भक्त की नोट पृष्ठ ३२ में दी है। प्रहलाद को गर्भ में और ध्रू को बन में नारद मुनि ने उपदेश दिया था।

†देखो नोट पृष्ठ २४। ‡देखो नोट पृष्ठ २४।

§सेवरी भिल्लिनी के दाँत से कुतर कर चीखे हुए बेर श्री रामचन्द्र ने बड़ी रुचि से भोग लगाये।

‖देखो नोट पृष्ठ ६१-६६। ¶देखो नोट पृष्ठ २४।

संत की महिमा पद् गरगाप ।
तिरलोचन के बिर्तिया आप* ॥ ११ ॥
पंढरपुर नामा निर्बान ।
देवल फेर छवा दई छान† ॥ १२ ॥
कासीपुरी कबीर कमाल ।
गैबी बालद् लाइ रसाल‡ ॥ १३ ॥
दिया भंडारा जन रैदास ।
कनक जनेऊ पद परकास§ ॥ १४ ॥
संत की महिमा कही न जाय ।
पीपा कूद परे दरियाय‖ ॥१५॥
दास गरीब संत कूँ सेव ।
चौरासी मिट गइ सुकदेव¶ ॥१६॥

*देखो नोट पृष्ठ ८८ ।

†पंढरपुर के ठाकुरद्वारे का दरवाज़ा फिर जाने और नया छप्पर बन जाने का हाल नामदेव भक्त की कथा नोट पृष्ठ ८५ में देखो।

‡भगवंत ने कबीर की लाज रखने को बैलों अन्न उन के द्वारे पर पहुंचा दिया [देखो नोट पृष्ठ ३४-३५] कमाल कबीर साहब के पुत्र और चेले थे ।

§देखो रैदास जी की कथा, नोट पृष्ठ ३४ ।

‖देखो नोट पृष्ठ ३३ ।

¶ तोते की चौरासी छूट कर शुकदेव जी का चोला पाने की कथा देखो नोट पृष्ठ ९३-९४।

पारख का अंग

अनंत कोटि अवतार हैं नहिं चितवै बुध नास ।
खालिक खेलै खलक में छः ऋतु बारह मास ॥१॥
पीछे पीछे हरि फिरैं आगे संत सुजान ।
संत करैं सोइ साँच है चारो जुग परमान ॥२॥
साँई सरिखे साध हैं इन सम तुल नहिं और ।
संत करैं सोइ होत है साहब अपनी ठौर ॥३॥
संतौं कारन सब रचा सकल जमीं असमान ।
चंद सूर पानी पवन जग तीरथ औ दान ॥४॥
ज्यूं बच्छा गउ की नजर में यूँ साँई औ संत ।
हरि जन के पीछे फिरैं भक्त बछल भगवंत ॥५॥
धारा मेरे संत की मुक्त से मिटै न अंस ।
बुरी भली भाषै नहीं सोई हमारा बंस ॥६॥
संखों जिव परलै करै संखों उतपति ख्याल ।
ऐसे समरथ संत हैं एक खिसै* नहिं बाल ॥७॥
गरजैं इन्द्र अनंत दल बहु बिध बरषा होय ।
संखों जिव परलै करैं संखों उतपति होय ॥८॥
इच्छा कर मारैं नहीं बिन इच्छा मर जाहिं ।
निःकामी निज संत हैं तहँ नहिं पाप लगाहिं ॥९॥
बरषैं तड़कैं डोब दैं तारैं तीनो लोक ।
ऐसे हरिजन संत हैं सौदा रोकम रोक† ॥१०॥

---

*उखड़े । †नकद, खरा ।

बहतर छोहन छै करी कूरूकूछत्तर देख* ।
कपिल सँघारे सगर के पाप लगा नहिं एक† ॥११॥
द्वादस कोट निनानवे गोरख जनक बिदेह ।
यूँ तारे यूँ डोब दे यामैं नहीं सँदेह ॥१२॥
सील माहिं सब लोक हैं ज्ञान ध्यान बैराग ।
जोग जग्य तप होम नेम गंगा गया पराग ॥१३॥
संतोष स्वर्ग पाताल सब और कहा मृत लोक ।
फिर पीछे कूँ क्या रहा जब आया संतोष ॥१४॥
बिवेक बिहंगम अचल है आया हिरदे माहिं ।
भक्ति मुक्ति औ ज्ञान गति फिर पीछे कुछ नाहिं १५॥
दया सर्ब का मूल है छिमा छका जो होय ।
तिरलोकी कूँ तार दे नाम निरंजन गोय ॥१६॥
दस हजार रापत‡ बली कामदेव महमंत ।
जा सिर अंकुस सील का तोरत गज के दंत ॥१७॥
क्रोध बली चंडाल है बल रापत द्वादस सहंस ।
एक पलक में डोब दे अनंत कोट जिव हंस ॥१८॥
जा सिर अंकुस छिमा का मारे तुस तुस§ बीन ।
तिरलोकी से काट दे जे होय साधु प्रवीन ॥१९॥

*कथा है कि कुरुक्षेत्र में महाभारत के संग्राम में बहत्तर छोहनी दल जमा हुआ था जिन में से एक न बचा--एक छोहनी में दस हज़ार हाथी, तीस हज़ार रथ, एक लाख मल्ल या पहलवान, दस लाख घोड़े, और छत्तीस करोड़ सिपाही होना बतलाते हैं ।

†कपिलमुनि ने राजा सगर के साठ हज़ार पुत्रों को जो उन से दुर्बचन बोले थे भस्म कर दिया ।

‡हाथी । §भूसी, छिलका ।

लोभ सदा लहरा रहै तिरलोकी में इच्छ ।
बल रापत* बीस सहस है पलक पलकके बिच्च ॥२०॥
ता अंकुस संतोष है तिरलोकी से काढ़ ।
काटै कोटक कटक दल संतोष तेग बड़ बाढ़ ॥२१॥
मोह मवासी मस्त है बल रापत* तीस सहंस ।
तिरलोकी परिवार है जहँ उपजे तहँ बंस ॥२२॥
जा सिर अंकुस बिबेक है पूरन करै मुराद ।
तिरलोकी की बासना ले बिबेक सब साध ॥२३॥

ब्रह्म बेदी

ज्ञान सागर अति उजागर निरबिकार निरंजनं ।
ब्रह्म ज्ञानी महा ध्यानी सत सुकृत दुख भंजनं ॥१॥
मूल चक्र गनेस बासा रक्त बरन जहँ जानिये ।
क्लिंग जाप कुलीन तज सब सब्द हमरा मानिये ॥२॥
स्वाद चक्र ब्रह्मादि बासा जहँ साबित्री ब्रह्मा रहै ।
ओँ जाप जपंत हंसा ज्ञान जोग सतगुरु कहै ॥३॥
नाभि कमल में बिस्नु बिसंभर जहँ लछमी सँग बास है ।
ह्रंग जाप जपंत हंसा जानत बिरला दास है ॥४॥
हृदय कमल महादेव देवं सती पारबती संग है ।
सोहं जाप जपंत हंसा ज्ञान जोग भल रंग है ॥५॥
कंठ कमल में बसै अबिद्या ज्ञान ध्यान बुधि नासही ।
लील चक्र मध काल कर्मं आवत दम कूँ फाँसही ॥६॥
त्रिकुटी कमल परमहंस पूरन सतगुरु समरथ आप है ।
मन पैाना सम सिंध मेलो सुरत निरत का जाप है ॥७॥

*हाथी ।

सहसकमलदल आप साहब ज्यूँ फूलन मध गंध है ।
पूर रहा जगदीस जोगी सत समरथ निरबंध है ॥ ८ ॥
मीन खोज* हनोज† हर दम उलट पंथ की बाट है ।
इला पिंगला सुखमन खोजो चल हंस औघट घाट है ॥ ९ ॥
ऐसा जोग बिजोग बरनौ जो संकर ने चित धरा ।
कुंभक रेचक द्वादस पलटै काल करम तिस तैं डरा ॥ १० ॥
सुन्न सिँघासन अमर आसन अलख पुरुष निर्बान है ।
अति लौलीन बेदीन मालिक कादिर कूँ कुरबान है ॥ ११ ॥
है नरसिंध अबंध अवगत कोट बैकुंठ नख रूप है ।
अपरंपार दीदार दरसन ऐसा अजब अनूप है ॥ १२ ॥
घुरैं निसान अखंड धुन सुन सोहं बेदी गाइये ।
बाजै नाद अगाध अगहै जहँ ले मन ठहराइये ॥ १३ ॥
सुरत निरत मन पवन पलटै बंकनाल सम कीजिये ।
स्रवै‡ फूल अस्थूल अस्थिर अमी महारस पीजिये ॥ १४ ॥
सप्तपुरी मेरुडंड खोजो मन मनसा गहि राखिये ।
उड़िहैं भँवर अकास गमनं पाँच पचीसो नाखिये§ ॥ १५ ॥
गगन मँडल की सैल करले बहुर न ऐसा दाव है ।
चल हंसा परलोक पठाऊँ भैसागर नहिं आव है ॥ १६ ॥
कंदर्प‖ जीत उदीत¶ जोगी षटकर्मी यह खेल है ।
अनुभव मालिन हार गूँथै सुरत निरत का मेल है ॥ १७ ॥

*मछली की राह जिस का निशान नहीं होता । †मदा । ‡चुवै ।
§रोकिबे । ‖कामदेव । ¶प्रकाशमान ।

सोहं जाप अथाप थरपौ त्रिकुटी संजम धुन लगै ।
मान सरोवर न्हान हंसा गंग सहसमुख जित वहै ॥१८॥
कालिन्द्री कुरबान कादिर अवगत मूरत खूब है ।
छत्र सेत बिसाल लोचन गलताना महबूब है ॥१९ ॥
दिल अंदर दीदार दरसन बाहर अंत न जाइये ।
काया माया कहा बपुरी* तन मन सीस चढ़ाइये ॥२०॥
अवगत आदि जुगादि जोगी सत पुरुष लौलीन है ।
गगन मँडल गलतान गैबी जाति अजाति बेदंन है ॥२१
सुख सागर रतनागर निरभय बिन मुख बानी गावही ।
बिन आकार अजोख निरमल दृष्टिमुष्टि न आवही २२
झिलमिल नूर जहूर जोती कोट पदम उजार है ।
उलट नैन बेसुन्न बिस्तर जहाँ तहाँ दीदार है॥२३॥
अष्टकमलदल सकल रमता त्रिकुटी कमलमध निरखहीं।
सेत धजा सुन गुमठ† आगे पचरंग झंडे फरकहीं ॥२४॥
सुन्न मंडल सतलोक चलिये नौ दर मूँद बेसुन्न है ।
बिन चसमों एक बिम्ब‡ देखा बिन सरवन सुनि धुन्न है२५
चरन कमल में हंस रहते बहुरंगी बरियाम है ।
सूछम मूरत स्याम सूरत अचल अभंगी राम है ॥ २६॥
नौ मुखंध§ निसंक खेलो दसवें दर मुख‖ मूल¶ है ।
मालिन रूप अनूप सजनी बिन बेली का फूल है॥२७॥

* बेचारी । † गुम्बज । ‡ प्रकाशमान गोलाकार । § द्वारे । ‖ मुख्य । ¶ सार वस्तु ।